WWW.saaid.net/kutob

क़ब्रों के पास जाकर अल्लाह तआला से दुआ करना निंदनीय बिदअत है

एवं इसी के साथ संलग्न है:

प्रार्थना को स्वीकार योग्य बनाने वाले शरई माध्यम

लेखक:

शैख़ माजिद बिन सुलेमान अल-रस्सी

शव्वाल १४३३ हिजरी

अनुवादक:

साबिर हुसैन मोहम्मद मोजीबुर रहमान

ترجمة باللغة الهندية لكتاب:

التبصرة

في بيان أن تحري إجابة دعاء الله تعالى عند القبور بدعة منكرة

ويليه:

الأسباب الشرعية لإجابة الدعاء

لفضيلة الشيخ ماجد بن سليمان الرسي –حفظه الله–

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

प्रस्तावना

الحمد لله وحده، والصلاة والسلام على من لا نبي بعده، أما بعد:

(हरेक प्रकार की प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो अकेला है, तथा दरूद व सलाम अवतरित हो उस (नबी) पर जिसके बाद कोई नबी नहीं आने वाला है, इस (प्रशंसा) के बादः)

अल्लाह तआला ने इंसानों और जिन्नों (मानवों एवं दानवों) को इसलिए पैदा किया है ताकि वो केवल एक अल्लाह की ही इबादत और वंदना करें तथा उसके साथ किसी को उसका साझीदार न बनाएं, अल्लाह तआला का फ़रमान हैः ﴿وَمَا خَلَقْتُ ٱلْجِنَّ وَٱلْإِنسَ إِلَّا لِيَعْبُدُونِ﴾ (हमने इंसानों तथा जिन्नों को केवल इसीलिए पैदा किया है कि वो मेरी इबादत करें)[1], और इबादत नाम है हरेक उस चीज़ का जिसे अल्लाह तआला पसंद फ़रमाता है तथा उससे राज़ी व प्रसन्न होता है चाहे वह स्पष्ट अथवा छिपे हुए कर्म हों या बात (वक्तव्य)।

"अतः, नमाज़, ज़कात, रोज़ा, हज, सत्य का पालन करना (सच बोलना), अमानत (न्यास) अदा करना, माता-पिता के संग अच्छा बर्ताव करना, वादा निभाना, भली बातों का हुक्म देना तथा बुरी बातों से रोकना, कुफ्फार और मुनाफ़िक़ीन (पाखण्डियों) से जिहाद करना एवं पड़ोसी, यतीम (अनाथ), निर्धन, यात्री तथा ग़ुलाम (दास) के संग एहसान (उपकार व भलाई) करना, पशु पक्षियों के संग उपकार करना, दुआ (प्रार्थना), ज़िक्र (अल्लाह का स्मरण) क़ुरआन का पाठ तथा इन जैसी अन्य इबादतों को अंजाम देना।

इसी प्रकार से अल्लाह तआला व उसके रसूल से प्रेम रखना, अल्लाह से डरना व उसकी ओर झुकना, दीन (धर्म) को उसी के लिए ख़ालिस व निश्छल करना, उसके आज्ञापालन पर सब्र (धैर्य) रखना, उसकी नेमत (अनुग्रह) पर शुक्र व धन्यवाद अदा करना, उसके फ़ैसले पर राज़ी व सहमत रहना, उसी पर तवक्कुल व भरोसा करना, उसकी रहमत (कृपा) की आशा रखना, उसके यातना से भयभीत रहना, तथा इन जैसी अन्य चीज़ें भी अल्लाह की इबादत (पूजा-अर्चना) ही में से हैं"।[2]

(अल्लाह की ख़ालिस़) इबादत के विपरीत अल्लाह तआला की इबादत में शिर्क करना है, वह इस प्रकार कि इंसान किसी को अल्लाह का साझीदार बना दे और उसकी वैसी ही

---

[1] सूरह ज़ारीयातः ५६ ।

[2] इब्ने तैमीय्या रह़िमहुल्लाह की पुस्तक "मज्मूअ अल-फ़तावा" (१०/ १४९-१५०) से साभार।

उपासना करना प्रारंभ कर दे जैसी उपासना वह अल्लाह की करता है, और उससे वैसे ही भयभीत हो जैसे अल्लाह से भयभीत होता है, तथा उसके लिए -दुआ, नमाज़, ज़ब्ह (बलि), नज़्र (मनौती) इत्यादि- इबादतों को अंजाम दे कर वैसे ही उसका सामीप्य प्राप्त करने का प्रयास करे जैसे वह अल्लाह तआला का सामीप्य प्राप्त करने की कोशिश करता है।

दुआ बड़ी महान व अत्यंत महत्वपूर्ण इबादत है, अल्लाह तआला ने विशेष रूप से इसका उल्लेख अनेक आयतों (श्लोकों) में किया है, तथा नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बहुतेरे सही हदीसों में इसकी प्रधानता, महत्ता तथा महानता का बखान किया है, और शरीअत (इस्लाम) ने दुआ के स्वीकार्य होने के सबब (माध्यम, कारण तथा मानदंड) को भी स्पष्ट रूप से बताया है कि कोई मुस्लिम यदि इसका पालन करते हुए तथा इसके विपरीत चीज़ों से बचते हुए दुआ करे तो प्रबल संभावना है कि उसकी दुआ स्वीकार कर ली जाए, और इस सबब के छः प्रकार हैं[1]:

प्रथम सबब स्वयं दुआ करने वाले से संबंधित है।

द्वितीय सबब उस इबादत (उपासना) से संबंधित है जिसको दुआ करने वाला अंजाम देता है।

तृतीय सबब दुआ करने वाले की स्थिति से संबंधित है।

चतुर्थ सबब दुआ किए जाने के समय से संबंधित है।

पंचम सबब दुआ किए जाने के स्थान से संबंधित है।

षष्ठ सबब दुआ करने के आदाब (शिष्टाचार) से संबंधित है[2]।

शरीअत (-ए- इस्लाम) ने दुआ क़बूल होने के सबब व कारण को बड़े विस्तार से बयान कर दिया है, किंतु इसके बावजूद दुआ को मक़बूल व स्वीकार्य करवाने के लिए प्रयासरत लोग तीन प्रकार के होते हैं, **एक** वो जो वलियों और नेक लोगों की क़ब्रों (समाधियों) पर जा कर यह गुमान रखते हुए उनसे दुआ करते हैं कि यदि उन लोगों से दुआ की जाए तो उसकी दुआ अति शीघ्र स्वीकार कर ली जाएगी, और निःसंदेह ऐसा करना तीन कारणों से गलत है:

---

[1] लेखक महोदय -अल्लाह तआला उनको माफ़ करे- का इसको केवल छः माध्यमों में सीमित कर देना यह उनके ज्ञान एवं शोध के आधार पर है, हम अल्लाह से ही सहायता चाहते हैं।

[2] इन शा अल्लाह शीघ्र ही इनमें से हरेक प्रकार की अलग-अलग व्याख्या की जाएगी।

प्रथमः अल्लाह तआला के सिवाय अन्य (ग़ैरुल्लाह) से दुआ करना शिर्क -ए- अकबर है जो मिल्लते इस्लाम से ख़ारिज व निष्कासित कर देता है, क्योंकि दुआ इबादत है[1], और सभी प्रकार की इबादतों को अल्लाह के सिवाय किसी अन्य के लिए अंजाम देना जायज़ नहीं है, अतः जिसने इन इबादतों एवं उपासनाओं में से कुछ भी ग़ैरुल्लाह के लिए अंजाम दिया तो उसने शिर्क किया।

द्वितीयः मुर्दा (मृत) अपने पुकारने वाले की दुआओं को नहीं सुनता है, जैसाकि अल्लाह तआला का फ़रमान हैः ﴿وَمَآ أَنتَ بِمُسۡمِعٖ مَّن فِي ٱلۡقُبُورِ﴾[2] (और आप उन लोगों को नहीं सुना सकते जो क़ब्रों में हैं)।

तृतीयः मुर्दा को जब स्वयं अपने आप के लिए भी फेर-बदल करने तथा स्वयं को लाभ पहुँचाने का अधिकार नहीं है तो अन्य को वह क्या लाभ पहुँचाएगा, अतः इस आधार पर मुर्दों से दुआ करना तथा उनसे अपनी आवश्यकतापूर्ति के लिए प्रार्थना करना निरी मूर्खता तथा महा व्यर्थ व बातिल कार्य है[3]।

लोगों की **दूसरी** क़िस्म जो अल्लाह तआला से दुआ करती है ये वो हैं जो, क़ुरआन व ह़दीस़ में अवतरित उन परिस्थितियों को तलाश करते हैं जिनके विषय में कहा गया है कि ये दुआ क़बूल किए जाने की अति उत्तम परिस्थितियां हैं ताकि उनकी दुआ क़बूल हो, जैसे रात्रि के अंतिम तीसरे पहर में दुआ करना, सज्दा में दुआ करना, अरफ़ा के दिन दुआ करना इत्यादि जिनके बारे में कहा गया है कि ये दुआ के स्वीकार्य होने के लिए आदर्श परिस्थितियां हैं, यही वो लोग हैं जो शरीअत के सीधे रास्ते का अनुपालन करने वाले तथा नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की पैरवी व अनुसरण करने वाले हैं, अल्लाह तआला हमें उन लोगों में से बनाए (आमीन)।

---

[1] क्योंकि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का फ़रमान हैः "दुआ ही इबादत है", इस ह़दीस़ को अबू दाऊद (१४७९) तथा तिर्मिज़ी (२९६९) इत्यादि ने नोमान बिन बशीर रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है, तथा अल्लामा अलबानी ने इसे सह़ीह़ कहा है।

[2] सूरह फ़ात़िरः २२।

[3] अल्लाह तआला ने मुझे इसी विषय (अर्थात ग़ैरुल्लाह से दुआ करना बातिल व असत्य है) से संबंधित एक पुस्तक के संकलन की तौफ़ीक़ दी जिसका शीर्षक है "ग़ैरुल्लाह से दुआ करने के बातिल (व्यर्थ) होने की पचास दलीलें", जिसका प्रकाशण दार अल-फ़ुरक़ान अल्जीरिया एवं दार अल-इस्तिक़ामा मिस्र ने किया है, और यह पुस्तक इसी शीर्षक से इंटरनेट पर भी उपलब्ध है।

लोगों की **तीसरी** क़िस्म वो है जो दुआ तो केवल एक अल्लाह से ही करते हैं तथा उसके सिवाय किसी अन्य को नहीं पुकारते, किंतु वो दुआ करने के लिए कुछ ऐसे स्थानों का चयन करते हैं जिनका चयन करने के लिए हमें शरीअत ने नहीं कहा है, बल्कि यदा-कदा ऐसे स्थानों पर दुआ करने से शरीअत हमें रोकती है, जैसे वो लोग जो क़ब्रों के पास दुआ करने को दुआ के स्वीकार योग्य होने का कारण मानते हैं, चाहे वो क़ब्रें नबियों की हों, नेक लोगों (महात्माओं) की हो या किसी और की, बहुत संभव है आप ऐसे लोगों को देखेंगे कि वो क़ब्र के पास जाकर इस प्रकार से दुआ करते हैं: हे मेरे रब मुझे बच्चा दे दे, हे मेरे रब मेरे क़र्ज़ (ऋण) की अदायगी करवा दे, तथा इसी प्रकार की अन्य दुआएं।

इस विनीत पुस्तिका में मैंने दूसरी क़िस्म के लोगों के एतक़ाद व आस्था के विषय में बहस व जिरह किया है, एवं उनकी त्रुटियों तथा गलतियों को बयान किया है, तत्पश्चात मैंने उनका शरई विकल्प भी बताया है, उन स्थानों, समय तथा परिस्थितियों का उल्लेख करते हुए जिनके बारे में शरीअत ने हमें बताया है कि दुआ के स्वीकार्य होने के लिए यह आदर्श परिस्थिति है, ताकि ह़क़ (सत्य) तथा उसके विपरीत (असत्य) के मध्य अंतर करने वाले पाठकों के ज्ञानचक्षु खुल जाएं, क्योंकि बंदा जब कोई ऐसा अमल और कर्म करता है जो शरीअत के विरुद्ध हो तो उसका वह अमल रद्द कर दिया जाता है और वह अल्लाह के दीन में वृद्धि करने का गुनाहगार भी बन जाता है, जैसाकि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया है: «مَنْ أَحْدَثَ فِي أَمْرِنَا هَذَا مَا لَيْسَ مِنْهُ فَهُوَ رَدٌّ» "जो हमारे मामले (दीन) में बिदअत (नवाचार) ईजाद करे तो वह रद्द तथा अस्वीकृत है"[1], और सही मुस्लिम की एक रिवायत में इस प्रकार है: «مَنْ عَمِلَ عَمَلًا لَيْسَ عَلَيْهِ أَمْرُنَا فَهُوَ رَدٌّ» (जो ऐसा कर्म करे जिसके करने का आदेश मैंने नहीं दिया है तो वह रद्द तथा अस्वीकृत है)[2]।

मैं अल्लाह तआला से प्रार्थनारत हूँ कि वह हमें तथा समस्त मुस्लिम गण को इख़्लास व निश्छल भाव से केवल अल्लाह की ही इबादत करने तथा अपने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का अनुसरण करने की तौफ़ीक़ (दैवानुग्रह) दे, तथा हमें और उन्हें गुमराही व पथभ्रष्टता से बचाए, और सर्वाधिक ज्ञान रखने वाला अल्लाह ही है, तथा दरूद व सलाम नाज़िल हो हमारे नबी मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) पर, एवं उनके परिवार वालों व साथियों पर, अधिकाधिक सलामती हो आप पर।

---

[1] इस ह़दीस़ को बुख़ारी (२६९७) व मुस्लिम (१७१८) ने रिवायत किया है।

[2] इस ह़दीस़ को मुस्लिम (१७१८) ने आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत किया है।

क़ब्रों के पास दुआ के अधिक स्वीकार्य होने का गुमान रखते हुए वहाँ दुआ करने को प्राथमिकता देने के बातिल (मिथ्या) होने का अध्याय।

समस्त प्रकार की प्रशंसा सारे संसार के रब व पालनहार अल्लाह के लिए है, तथा दरूद व सलाम अवतरित हो सभी नबियों व रसूलों से कुलीनतम व अति प्रतिष्ठित, हमारे सैय्यिद (सरदार) मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) पर, तथा आपके समस्त परिवार वालों व साथियों पर।

इस (प्रशंसा) के बादः

ग़ैरुल्लाह से दुआ करना शिर्क -ए- अकबर है जो मिल्लत -ए- इस्लाम से निष्कासित व ख़ारिज कर देता है, जो कुफ्र एवं सर्वदा जहन्नम में रहने को वाजिब व अपरिहार्य कर देता है, यह ऐसा मामला है जिस पर इज्मा (सभी उलेमा की सर्वसहमती) है, और यह मामला इस प्रकार से बिल्कुल स्पष्ट है कि जिस पर कोई धूल नहीं है।

जहाँ तक बात है क़ब्रों के पास यह गुमान रखते हुए दुआ करना कि यह क़बूल होने के अधिक योग्य है, तो ऐसा करना प्रत्यक्ष रूप से तो शिर्क नहीं है, किंतु शिर्क तक पहुँचने का बहुत बड़ा माध्यम है, क्योंकि शैतान ऐसा करने वाले के समक्ष उस क़ब्र वाले को बढ़ा-चढ़ा कर पेश करेगा कि अल्लाह को छोड़ कर इसी से दुआ करो, विशेष रूप से जब ऐसा करने वाला व्यक्ति परेशान व व्यथित हो, और यदि उसने ऐसा कर लिया तो वह शिर्क -ए- अकबर में पड़ गया, हम इससे अल्लाह तआला की शरण चाहते हैं।

क़ब्रों के पास दुआ के अधिक स्वीकार्य होने का गुमान रखते हुए वहाँ दुआ करने को प्राथमिकता देना पाँच कारणों से बातिल व मिथ्या हैः

प्रथमः न तो क़ुरआन में और न ही ह़दीस़ में ऐसा कुछ अवतरित हुआ है जो क़ब्रों के पास दुआ करने की फ़ज़ीलत व प्रधानता को प्रमाणित करता हो, तथा शरीअत -ए- इस्लाम में यह नियम विदित है कि हरेक वह इबादत जिसका उल्लेख क़ुरआन अथवा ह़दीस़ में न हुआ हो वह उसके करने वाले के ऊपर ही लौटा दी जाती है नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इस कथन के कारणः «مَنْ أَحْدَثَ فِي أَمْرِنَا هَذَا[1] مَا لَيْسَ مِنْهُ فَهُوَ رَدٌّ»[2] “जो हमारे मामले (दीन) में बिदअत (नवाचार) ईजाद करे तो वह रद्द तथा अस्वीकृत है”, और एक रिवायत में इस प्रकार

[1] ह़दीस़ में उल्लेखित शब्द “الأمر, अल-अम्र (मामला)” से तात्पर्य दीन (धर्म) है।

[2] इस ह़दीस़ की तख़रीज (विवरण) का उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है।

है: «مَنْ عَمِلَ عَمَلًا لَيْسَ عَلَيْهِ أَمْرُنَا فَهُوَ رَدٌّ»[1] (जो ऐसा कर्म करे जिसके करने का आदेश मैंने नहीं दिया है तो वह रद्द तथा अस्वीकृत है)।

द्वितीयः यदि क़ब्रों के पास दुआ करने को प्राथमिकता देना मशरूअ होता अर्थात हमारी शरीअत ने ऐसा करने को कहा होता -चाहे वह वाजिबी (अपरिहार्य) तौर पर होता अथवा मुस्तहब (पुनीत) तौर पर- तो सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की क़ब्र के पास ऐसा अवश्य करते, इसी प्रकार प्रथम तीन शताब्दी के सलफ़ सालेहीन (नेक पूर्वजों) से भी ऐसा करना प्रमाणित नहीं है।

फिर यह कि सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम को अपने समय में कई बार सुखाड़ का सामना करना पड़ा, उनपर विपत्तियां आईं, किंतु इन सब के बावजूद यह कहीं से प्रमाणित नहीं है कि वो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की क़ब्र (समाधि) के पास आए हों तथा वहाँ आकर इस संबंध में दुआ किया हो, और न ही उन्होंने ऐसा किसी बड़े, आदरणीय व सम्मानित सहाबी की क़ब्र के पास किया, क्योंकि यदि ऐसा करना मशरूअ होता तो वो ऐसा अवश्य करते और उनका ऐसा करना हम तक ज़रूर पहुँचता, क्योंकि ऐसा होने के पश्चात उसको हम तक लोगों द्वारा पहुँचाने के बहुतेरे कारण मौजूद थे, और उनका ऐसा न करना मानो उन सभी की ओर से ऐसा करने के बिदअत होने पर मौन सहमति (इज्माअ) को दर्शाता है, अतः आप इस में गहन सोच-विचार करें क्योंकि यह बिंदु अत्यंत महत्वपूर्ण व लाभदायक है।

इब्ने तैमीय्या[2] रहिमहुल्लाह फ़रमाते हैं: “जो ह़दीस़ की पुस्तकों को पढ़ेगा तथा सलफ़ (नेक पूर्वजों) की स्थितियों का आंकलन करेगा उसे यह यक़ीन हो जाएगा कि वो लोग क़ब्रों के

---

[1] पूर्व में ह़दीस़ की तख़रीज (विवरण) का उल्लेख किया जा चुका है।

[2] आप हैं: इमाम अल्लामा प्रकांड विद्वान फ़क़ीह (धर्मशास्त्री), सही मायनों में शैख़ुल इस्लाम जैसी उपाधि से सुशोभित होने के योग्य, अबुल अब्बास, तक़ीयुद्दीन, अह़मद पुत्र अब्दुल ह़लीम पुत्र अब्दुस्सलाम, अल-ह़र्रानी तत्पश्चात दिमश्क़ी, जिनकी उपाधि इब्ने तैमीय्या है, आपने दीन -ए- इस्लाम को लोगों के बीच अपरिचित हो जाने के पश्चात पूनर्जीवित किया, और जब अहल -ए- कलाम की बिदअतों, सूफ़ियों की ख़ुराफ़ातों (असंगत कर्मों), क़ुबूरियों की शिर्कीय्यात तथा फ़लसफ़ियों (दार्शनिकों) एवं राफ़ज़ीय्यों के इलह़ाद (नास्तिकता) ने समस्त संसार को अंधकारमय बना रखा था, ऐसे समय में आपने क़ुरआन व ह़दीस़ के अनुसार दीन -ए- इस्लाम की साफ़-सुथरी दावत का दिया जलाया और इसे पूनर्जीवित करने का काम किया, डंके की चोट पर ह़क़ (सत्य) का एलान किया, मिथ्यावादियों (अहले बातिल) से मुनाज़िरह (वाद-विवाद) किया, और इस कारण आपको जेल का कष्ट भी भोगना पड़ा, अंततः अल्लाह तआला ने आपके ज्ञान की धाक लोगों के दिलों में बैठा दी, तथा आपकी पुस्तकें चहुँ ओर फैल गईं, और स्थिति यह हो गई कि आपके बाद आने वाले उलेमा आपका अनुसरण करने को विवश हो गए, जहाँ तक बात है आपके

पास इस्तेग़ास़ा (गुहार, फरियाद) नहीं करते थे, **और न ही वो वहाँ पर जा कर दुआ करने को प्राथमिकता देते थे**, बल्कि जो अज्ञानी अज्ञानतावश ऐसे करता तो वो उसे ऐसा करने से रोकते थे, जैसाकि हमने कुछ का उल्लेख भी किया है, और वहाँ पर जाकर दुआ करने की दो स्थिति हो सकती है कि या तो दूसरे स्थान पर जाकर दुआ करने की तुलना में वहाँ पर दुआ करना अधिक लाभकारी होगा अथवा नहीं होगा, और यदि हम मान लें (जो असंभव है) कि वहाँ पर दुआ करना अफ़ज़ल व उत्तम है तो फिर यह जायज़ नहीं होगा कि इसका इल्म सहाबा, ताबईन और तबा ताबईन से छिप्त व गुप्त रह गया हो कि प्रथम तीन शताब्दियों के उलेमा इस बड़े फ़ज़्ल की महत्ता से अनभिज्ञ रह गए हों तथा इसका ज्ञान बाद में आने वाले लोगों को हुआ हो, और न ही उन सहाबा के बारे में यह मान लेना जायज़ है कि उन्होंने इस महा फज़्ल को जानने के बाद भी इसकी उपेक्षा की हो जब्कि वह हरेक प्रकार की भलाईयों के लिए सदा तत्पर रहा करते थे विशेष रूप से दुआ के लिए, क्योंकि व्यथित एवं व्याकुल व्यक्ति प्रत्येक उस कारण को अपनाता है जिसके द्वारा उसकी व्यथा दूर होने की उसे आशा होती है यद्यपि वह कारण एक प्रकार से घृणित ही क्यों न हो, अतः यह कैसे संभव है कि अपनी व्यथा में दुआ के मोहताज होने और क़ब्रों के पास की गई दुआ के अधिक प्रभावी होने का ज्ञान होने के बावजूद वो लोग क़ब्रों के पास जा कर दुआ नहीं करते थे?!

ऐसा होना नैसर्गिक एवं शरई दोनों रूप से असंभव है।

और यदि वहाँ जाकर दुआ करना अफ़ज़ल व श्रेष्ठकर नहीं है तो इसका अर्थ यह हुआ कि वहाँ जाकर दुआ करना ज़लालत व गुमराही (पथभ्रष्टता तथा पाप) है, इसी में से यह भी गिना जाएगा कि वह ऐसे स्थानों पर दुआ करने के लिए जाए जिसकी कोई फ़ज़ीलत व श्रेष्ठता प्रमाणित नहीं है, जैसे नदियों के किनारे, वृक्षारोपण वाले स्थान पर, बाज़ार की दुकानों पर, रास्ते के किनारे इत्यादि जैसे असंख्य स्थान जिनका शुमार व गणना केवल अल्लाह तआला ही कर सकता है।

शिष्यों की तो उनमें से कुछ तो ऐसे हैं जो इस्लाम के प्रकांड विद्वान माने गए, जैसे इब्ने क़ैय्यिम, इब्ने कस़ीर, ज़ह्बी, इब्ने अब्दुल हादी आदि, आप रहि़महुल्लाह का देहांत सन ७२८ हिजरी में हुआ, कुछेक शोधकर्ताओं ने उन सभी वक्तव्यों को जो आपकी शान में लोगों ने कहे हैं उनको एक व्यापक एवं अति उत्तम पुस्तक में संकलित किया है तथा उसका नाम रखा है (अल-जामे लि सीरत -ए- शैख़िल इस्लाम इब्ने तैमीय्या ख़िलाल सबअता क़ुरून (सात शताब्दियों में शैख़ुल इस्लाम इब्ने तैमीय्या के बारे में लिखी गई लेखनी को एकत्रित करती जीवनी संग्रह), जिसका पर्यवेक्षण शैख़ बकर अबू ज़ैद रहि़महुल्लाह ने किया है, और प्रकाशन किया है दार आलम अल-फ़वायद, मक्का ने, अतः जिसे आपके विषय में और अधिक जानने की लालसा हो वह इस पुस्तक का अध्यन अवश्य करे।

और क़ुरआन व ह़दीस़ में अनेक स्थानों पर इसका प्रमाण मौजूद है, जैसे अल्लाह तआला का यह फ़रमान है: ﴿أَمۡ لَهُمۡ شُرَكَٰٓؤُاْ شَرَعُواْ لَهُم مِّنَ ٱلدِّينِ مَا لَمۡ يَأۡذَنۢ بِهِ ٱللَّهُۚ﴾[1] (क्या उन लोगों ने ऐसे (अल्लाह के) साझीदार (बना रखे) हैं जिन्होंने ऐसे दीनी अह़काम (धार्मिक प्रावधान) तय कर रखे हैं जिनकी अनुमति अल्लाह ने नहीं दी है), और जब अल्लाह तआला ने क़ब्रों के पास जाकर दुआ करने को न तो वाजिबी (अपरिहार्य) तौर पर और न ही मुस्तह़ब (वांछनीय) रूप में मशरूअ किया (विधान बनाया) है तो जो इसे मशरूअ क़रार देगा मानो उसने दीन में ऐसी चीज़ को मशरूअ क़रार दिया जिसकी अनुमति अल्लाह तआला ने नहीं दी है।

और अल्लाह तआला का फ़रमान है: ﴿قُلۡ إِنَّمَا حَرَّمَ رَبِّيَ ٱلۡفَوَٰحِشَ مَا ظَهَرَ مِنۡهَا وَمَا بَطَنَ وَٱلۡإِثۡمَ وَٱلۡبَغۡيَ بِغَيۡرِ ٱلۡحَقِّ وَأَن تُشۡرِكُواْ بِٱللَّهِ مَا لَمۡ يُنَزِّلۡ بِهِۦ سُلۡطَٰنٗا وَأَن تَقُولُواْ عَلَى ٱللَّهِ مَا لَا تَعۡلَمُونَ﴾[2] (-हे रसूल- आप कह दीजिए कि निस्संदेह मेरे रब ने उन समस्त फह़श बातों -बदकारियों, अश्लीलताओं व बेहूदापन- को ह़राम व वर्जित किया है जो स्पष्ट हैं या गुप्त व छिप्त, और गुनाह की हरेक बात को, और नाह़क़ (अकारण) किसी पर अत्याचार करने को, और इस बात को कि तुम अल्लाह के साथ किसी ऐसी चीज़ को साझी बनाओ जिसकी अल्लाह ने कोई सनद -दलील, आधार- नाज़िल नहीं की और इस बात को कि तुम लोग अल्लाह के ज़िम्मे ऐसी बात लगा दो जिसको तुम जानते नहीं)।

इस से प्रमाणित हुआ कि क़बों के पास जाकर इबादत करना एक प्रकार से अल्लाह के साथ शरीक ठहराना है जिसकी उसने कोई दलील नहीं उतारी, क्योंकि अल्लाह तआला ने ऐसी कोई दलील नहीं अवतरित की जिससे यह प्रमाणित होता हो कि विशेष रूप से क़ब्रों के पास जा कर दुआ करना मुस्तह़ब व श्रेष्ठकर है तथा इसे अन्य पर प्रधानता प्राप्त है, और जिसने इसे दीन का एक अभिन्न अंग बना दिया उसने अल्लाह तआला के विषय में ऐसी बात कही जिसका उसे कोई ज्ञान नहीं है, और कितनी अच्छी बात कही है अल्लाह तआला ने ﴿مَا لَمۡ يُنَزِّلۡ بِهِۦ سُلۡطَٰنٗا﴾ (जिसकी अल्लाह ने कोई दलील नहीं उतारी) ताकि किस्से कहानियों एवं कपोल

[1] सूरह शूराः २१।

[2] सूरह अल-आराफ़ः ३३।

कल्पनाओं को दलील नहीं बनाया जा सके।" उनका कथन समाप्त हुआ।[1]

और इब्नुल क़ैय्यिम[2] रह़िमहुल्लाह ने शरई ज़ियारत का उल्लेख करने के पश्चात लिखा है किः

"क़ब्र वालों के विषय में बीस से कुछेक अधिक सालों तक नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की यही सुन्नत रही, यहाँ तक कि अल्लाह तआला ने आपको वफ़ात दे दी, और आप के ख़ुलफा -ए- राशिदीन (पथ प्रदर्शित उत्तराधिकारियों) का भी यही त़रीका रहा, और समस्त सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम तथा ताबेईन रहिमहुमुल्लाह (सहाबा के अनुयायियों) का अमल भी इसी पर रहा, क्या इस पृथ्वी पर बसने वाले किसी भी व्यक्ति के लिए संभव है कि वो उनसे ऐसी कोई बात प्रमाणित करके दिखा दे चाहे उसकी सनद सह़ीह़ हो अथवा ह़सन अथवा ज़ईफ़ या चाहे मुन्क़तअ (आधारहीन ह़दीस़ का एक प्रकार) ही क्यों न हो जिससे यह साबित हो जाए कि **उनको जब ज़रूरत पड़ती थी तो वो क़ब्रों के पास जाकर दुआ किया करते थे** तथा उसको छूते थे, इसको तो छोड़ ही दीजिए क्या (कोई यह प्रमाणित करने में सक्षम है कि) वो वहाँ नमाज़ पढ़ते थे, या क़ब्र वालों से दुआ माँगते थे, या उनसे अपनी आवश्यकतापूर्ति के लिए कहा करते थे?

---

[1] इक़्तेज़ा अल-स़िरात अल-मुस्तक़ीम (२/ ६८७-६८८), अधिक लाभ के लिए इसे भी देखें (२/ ७२८), और इसी प्रकार से मजमूअ अल-फ़तावा (२७/ १२९-१३०) को भी देखें।

[2] आप का नाम हैः मुहम्मद पुत्र अबू बकर पुत्र साद अल-ज़रई अल-दिमश्की, आप इब्ने क़ैय्यिम अल-जौज़ीय्या के नाम से प्रसिद्ध हैं, आप आठवीं शताब्दी के उलेमा में से हैं, तथा आप अपने गुरू इब्ने तैमीय्या के सानिध्य में रहे यहाँ तक कि सन ७२८ हिजरी में उनका देहांत हो गया, आप उनके अति विशिष्ट शिष्य रहे हैं, और उनके देहांत के बाद आपने दावत एवं इल्मी जिहाद का बीड़ा उठाया यहाँ तक कि सन ७५१ हिजरी में आपकी मृत्यु हो गई, आप प्रकांड विद्वान हैं तथा अकाट दलील पेश करने वाले एवं प्रमाणों से सुक्ष्म से सुक्ष्म मसला समझने की क्षमता रखने वाले व्यक्तित्व के धनी एवं बहुतेरे पुस्तकों के लेखक हैं, आपकी पुस्तकों को लोगों ने हाथों हाथ लिया, और आपकी पुस्तकों को ऐसी स्वीकार्यता प्राप्त हुई कि आपके बाद आने वाले लोग मानो आपकी ही पुस्तकों पर आश्रित हैं, उन्होंने इस्लामी अक़ीदा को बड़े ज़ोरदार ढ़ंग से लोगों के समक्ष रखा व उसे फैलाया, और बिदअतियों (नवाचारियों) पर गद्य एवं पद्य दोनों रूप में प्रहार किया विशेष रूप से दार्शनिकों (फलसफियों), क़बूरीयों, तावील (शरई नुस़ूस़ व श्लोकों की मनमानी व्याख्या) करने वालों एवं सूफ़ियों पर कुठराघात किया, अल्लाह तआला की आप पर असीम कृपा हो, आपने तथा आपके गुरू ने अल्लाह के दीन को पूनर्जीवित करने का कार्य किया, संक्षेप में कहा जाए तो आप इस्लामी समुदाय में एक बड़े बदलाव का घोतक थे। आपकी जीवनी के बारे में अधिक जानकारी के लिए देखें : इब्न अल-इमाद की "शज़रात अल-ज़हब" तथा इब्ने रजब की "ज़ैल त़बक़ात अल-हनाबिलह", और आप की सबसे व्यापक एवं विस्तृत जीवनी लिखी है शैख़ बकर बिन अब्दुल्लाह अबू ज़ैद रह़िमहुल्लाह ने एवं उनकी पुस्तक का नाम है "इब्ने क़ैय्यिम अल-जौज़ीय्या ह़यातुहू व आस़ारुहू"।

इस संबंध में यदि एक भी “अस़र”[1] (प्रमाण) मिल जाए या एक भी बात स़ाबित हो जाए तो हमें अवश्य सूचित करें।”[2]

मैं कहता हूँ किः **सलफ़ सालेहीन से जो बात प्रमाणित है वह यह है कि वो क़ब्रों का भ्रमण (ज़ियारत) तो करते थे किंतु वहाँ पर दुआ करने के लिए वो ऐसा नहीं करते थे**, अतः वहीं पर रुक जाना वाजिब है जहाँ पर वो लोग रुके थे, चुनाँचे “इब्ने औन” से रिवायत है कि एक आदमी ने नाफे से प्रश्न कियाः क्या इब्ने उमर[3] (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) क़ब्र को सलाम करते थे?

तो उन्होंने कहाः हाँ, मैंने सौ बार या सौ बार से भी अधिक उनको ऐसा करते हुए देखा है, जब वह उसके समीप से गुज़रते तो वहाँ खड़े होते और कहतेः अस्सलामो अलन्नबी, अस्सलामो अला अबी बकर, अस्सलामो अला उमर अबी (अर्थात नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर सलमती (शांति) हो, अबू बकर रज़ियल्लाहु अन्हु पर सलामती हो, मेरे पिता उमर रज़ियल्लाहु अन्हु पर सलामती हो)।[4]

---

[1] सामान्य रूप से एवं आम अर्थों में “अस़र” कहा जाता है सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम अथवा ताबेईन रहिमहुमुल्लाह के कथन को, किंतु कभी इसका प्रयोग नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के कथन अर्थात “ह़दीस़” के लिए भी किया जाता है।

[2] इग़ास़ा अल-लहफ़ान (पृष्ठः ३६७-३६८)।

[3] अर्थात माननीय सहाबी अब्दुल्लाह बिन उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अन्हुमा।

[4] इसको बैहिक़ी ने “कुब्रा” (५/ २४५) में नाफे से रिवायत किया है, और आजुर्री ने “अल-शरीअत” (१९१४) में मुआज़ बिन मुआज़ से, उन्होंने औन से और उन्होंने नाफे से रिवायत किया है, अबू बकर व उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा को नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के संग दफ़न करने से संबंधित अध्याय में।
और इमाम मालिक ने “मुवत्ता” में यात्रा में नमाज़ कम करके पढ़ने का पाठ के अंतर्गत, नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दरूद भेजने के अध्याय में, अब्दुल्लाह बिन दीनार से रिवायत किया है, उन्होंने कहा किः मैंने अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा को देखा कि ... ।
और इब्ने तैमीय्या रह़िमहुल्लाह ने अपनी पुस्तक “एक़्तेज़ा अल-स़िरात अल-मुस्तक़ीम लि मुख़ालिफ़ते अस़हाब अल-ज़हीम” (२/ ६६८) में इसकी निस्बत इब्ने बत्ता की पुस्तक (अल-इबाना) की ओर की है, तथा इसकी सनद को सहीह कहा है।
मुआज़ बिन मुआज़ अल-अंबरी अबुल मुस़न्ना, स़िक़ा मुत्क़िन (सच्चे व विश्वसनीय) रावी (वाचक) हैं, और इब्ने औन उनके गुरु हैं। उनकी जीवनी पढ़ने के लिए “तहज़ीब अल-कमाल” को देखें।
टिप्पणीः “अल- शरीअह” में “इब्ने औफ़” आया है जब्कि सही “इब्ने औन” है, जिनका पूरा नाम हैः अब्दुल्लाह बिन औन अलमुज़नी, अबू औन अल-बस़री, वह स़िक़ा स़ब्त फाज़िल (सच्चे विश्वसनीय एवं प्रकांड विद्वान) रावी हैं। उनकी जीवनी के लिए “तहज़ीब अल-कमाल” को देखें।

और इमाम मालिक ने "मुवत्ता" में अब्दुल्लाह बिन दीनार से रिवायत किया है, वह कहते हैं कि मैंने अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) को देखा कि वह नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की क़ब्र के पास खड़े हुए तथा नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दरूद भेजा, एवं अबू बकर व उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा पर भी।[1]

बैहिक़ी ने "शुअब अल-ईमान"[2] में उबैदुल्लाह से उन्होंने नाफे से, उन्होंने इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत किया है कि वह जब यात्रा से वापस आते तो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की क़ब्र से आरंभ करते, अर्थात वह सर्वप्रथम नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दरूद भेजते, उनके लिए दुआ करते और क़ब्र को नहीं छूते, तत्पश्चात अबू बकर रज़ियल्लाहु अन्हु पर सलाम भेजते, फिर उसके बाद कहतेः हे मेरे पिता आप पर सलामती हो।

इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा के इस "अस़र" में उन लोगों का स्पष्ट खण्डन है जो यह कहते हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की क़ब्र के पास दुआ करना श्रेष्ठकर है, क्योंकि यदि वहाँ पर दुआ करने की कोई विशिष्टता व फ़ज़ीलत होती तो इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा ऐसा अवश्य करते, क्योंकि वह सहाबा के बीच सुन्नत की सर्वाधिक पैरवी करने वाले थे, जब्कि उन्हें दसियों बार नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की क़ब्र के पास देखा गया।

इब्ने उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा के इस "अस़र" में हम देख रहे हैं कि वह जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के क़ब्र की ज़ियारत करते तो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लिए दुआ करते स्वयं अपने लिए दुआ नहीं करते, क्योंकि यदि क़ब्रों के पास दुआ करने की कोई विशेषता व प्रधानता होती तो वह अपने लिए वहाँ पर दुआ करते, लेकिन उन्होंने शरीअत का अनुसरण करते हुए केवल क़ब्र वाले के लिए ही दुआ करने पर बस किया।

क़ब्रों के पास दुआ करने को प्राथमिकता देने को मिथ्या क़रार देने वाली **तीसरी दलीलः** कुछेक सिद्ध सलफ़ (नेक पूर्वजों) से यह वर्णित है कि उन्होंने क़ब्रों के पास जाकर दुआ करने को प्राथमिकता देने वाले लोगों को ऐसा करने से रोका है, इन्हीं प्रमाणों में से वह है जो ज़ैनुल आबिदीन अली बिन हुसैन बिन अली बिन अबी त़ालिब रह़िमहुल्लाह से वर्णित है कि, उन्होंने ने एक व्यक्ति को नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की समाधि स्थल (क़ब्र) के इर्द-गिर्द बनी दीवार के एक छिद्र से आता तथा भीतर जा कर क़ब्र के पास **दुआ** करते हुए देखा

[1] यात्रा में नमाज़ क़स़्र (छोटा) करके पढ़ने का पाठ, नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दरूद भेजने का अध्याय।

[2] (८/ ८८-८९) संख्यांक (३८५४), और इस ह़दीस़ को अब्दुर्रज़्ज़ाक़ ने भी "अल-मुस़न्नफ़" (६७२४) में रिवायत किया है।

तो उसे रोका और कहाः तुम्हें एक ह़दीस़ न सुनाऊँ जो मेरे पिता (हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु) ने मेरे दादा (अली रज़ियल्लाहु अन्हु) से और उन्होंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से सुना है कि आपने फरमायाः «لَا تَتَّخِذُوا قَبْرِي عِيدًا، وَلَا بُيُوتَكُمْ قُبورا؛ وسلموا عليَّ، فَإِنَّ تَسْلِيمَكُمْ يَبْلُغُنِي أَيْنَ كُنْتُمْ» "तुम मेरी समाधि को उत्सव (स्थल) न बना लेना तथा न ही अपने घरों को क़ब्रिस्तान बना लेना, और मुझ पर कहीं से भी सलाम भेजते रहना, क्योंकि तुम्हारा दरूद व सलाम मुझ तक पहुँच जाएग, तुम चाहे जहाँ कहीं भी रहो"।[1]

तथा इस्माईल अल-क़ाज़ी की रिवायत में हैः «وصلوا علي وسلموا حيثما كنتم، فسيبلغني سلامكم وصلاتكم» "तुम जहाँ कहीं भी रहो मेरे ऊपर दरूद व सलाम भेजते रहो, तुम्हारा दरूद व सलाम शीघ्र ही मुझ तक पहूँच जाएगा"।

इब्ने तैमीय्या रह़िमहुल्लाह फ़रमाते हैं : यह अली बिन हुसैन ज़ैनुल आबदीन हैं जो धर्म एवं ज्ञान के आधार पर सर्वश्रेष्ठ ताबईन में से हैं, यहाँ तक कि ज़ुहरी ने उनके विषय में कहा है किः (मैंने उन जैसा व्यक्ति हाशमी परिवार में दूसरा नहीं देखा), वह अपनी सनद से इस ह़दीस़ को ज़िक्र कर रहे हैं, जिसके शब्द हैं : «لَا تَتَّخِذُوا بَيتِي عِيدًا؛ فَإِنَّ تَسْلِيمَكُمْ يَبْلُغُنِي أَيْنَما كُنْتُمْ» "तुम मेरे घर को उत्सव (स्थल) न बना लेना, (और मुझ पर कहीं से भी दरूद भेजते रहना) क्योंकि तुम्हारा दरूद व सलाम मुझ तक पहुँच जाएगा तुम जहाँ कहीं भी रहो", जिसका अर्थ यह निकलता है कि जिस प्रकार से आपके घर के समीप जाकर आप पर दरूद भेजने की कोई विशेषता नहीं है ठीक उसी प्रकार से आपके घर के समीप जा कर आप को सलाम करने की भी कोई विशेषता नहीं है[2], बल्कि उन्होंने आपके घर (क़ब्र) को इस कार्य के लिए आरक्षित करने से रोका है।[3]

इस अस़र से हमें यह लाभ मिलता है कि अली बिन हुसैन -जो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के "अहले बैत" में सर्वाधिक महान व ज्ञानियों में से हैं और जो अपने परनाना सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अधिकार को दूसरों कि तुलना में अधिक जानने वाले हैं-

---

[1] इस ह़दीस़ को अबू याला ने "मुस्नद" (१/ ३६१) संख्यांक (४६९), इब्ने अबी शैबा ने "मुस़न्नफ़" (७५४१) और इस्माईल अल-क़ाज़ी ने "फ़ज़्लुस्सलाते अलन्नबी" (२०) में रिवायत किया है, और अलबानी ने इस पुस्तक के फुटनोट (पादटीका) में कहा है किः यह ह़दीस़ अपने त़रीक़ एवं शवाहिद के आधार पर सहीह है, और इसकी तख़रीज मैंने अपनी पुस्तक "तह़ज़ीर अल-साजिद" में की है।

[2] यह इशारा है इस ह़दीस़ की ओरः «لَا تَتَّخِذُوا قَبْرِي عِيدًا، وَلَا بُيُوتَكُمْ قُبورا ....» ह़दीस़ के अंत तक।

[3] अर्रद्द अला अल-इख़नाई (पृष्ठः २६५)।

उन्होंने उस व्यक्ति का खण्डन किया जो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की क़ब्र के पास दुआ के लिए आया था, और उनके ऐसा (मना) करने पर किसी ने भी उनका विरोध नहीं किया, तो इसका अर्थ यह निकलता है कि अपने समय में समस्त ताबईन का इस पर इज्मा था अर्थात सर्वसहमति थी कि क़ब्रों के पास जा कर दुआ करना ह़राम है।

चतुर्थः क़ब्र के पास दुआ करने को प्राथमिकत देने के बातिल व व्यर्थ होने की दलीलों में से एक यह भी है कि ऐसा करने को प्रोत्साहित करने वाली चीज़ क़ब्र वालों की ताज़ीम (आदर) व स्तुति करना है, जब्कि वाजिब यह है कि मुसलमान को दुआ करने एवं अन्य समस्त इबादतें करने पर प्रेरित करने वाली चीज़ अल्लाह तआला के आदेश तथा उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के आदेश की ताज़ीम व स्तुति हों, न कि क़ब्र वाले या उन जैसे अन्य मख़लूक़ (जीव) की ताज़ीम व आदर हो।

पंचमः नेक लोगों की क़ब्रों के पास जाकर दुआ करना स्वयं उस क़ब्र वाले से दुआ करने में पड़ जाने का बहुत बड़ा माध्यम है, विशेषतः बिल्कुल व्यथित एवं व्याकुलता की स्थिति में, और ह़राम तक ले जाने वाला माध्यम भी ह़राम ही होता है, जलालुद्दीन सुयूती रह़िमहुल्लाह ने अपनी किताब "अल-अम्र बिल-इत्तेबाअ व अल-नह्यि अन अल-इब्तिदाअ" में लिखा है, जिसको निम्न में शब्दशः नक़ल किया जा रहा हैः

उस स्थान[1] के संबंध में इस प्रकार की दंतकथाएं बयान की जाती हैं जिससे उसके प्रभावी होने का आभास होता है, जैसे एक व्यक्ति ने वहाँ पर दुआ किया तो उसकी दुआ क़बूल हो गई, या वहाँ पर मन्नत माँगी तो उसकी ज़रूरत पूरी हो गई, या इसी प्रकार की अन्य बातें, तो ध्यान रहे कि **इन्हीं सब कारणों से मूर्तियों की पूजा की जाती थी, तथा इसी प्रकार के शुबुहात (भ्रांतियों) के कारण इस धरा पर शिर्क पनपा।**[2]

क़ब्रों के पास दुआ करने को प्राथमिकता देने वाले मसले के संबंध में इमाम मालिक आदि उलेमा के कथन का उल्लेख

इस विषय में उलेमा के जो कथन वर्णित हैं उनमें से एक वह भी है जो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की क़ब्र के पास दुआ करने को बिदअत कहने के संबंध में इमाम मालिक

[1] अर्थातः क़ब्र (समाधि)।

[2] पृष्ठः १२३।

रह़िमहुल्लाह से वर्णित है, अतः उनके सिवाय अन्य की क़ब्र पर जाकर दुआ करना बिदअत होने का अधिक पात्र है, चुनाँचे मालिक रह़िमहुल्लाह ने फ़रमायाः

“मदीना वासियों में से जो मस्जिद (-ए- नबवी) में प्रवेश करे अथवा उससे बाहर निकले उसके लिए कतई आवश्यक नहीं है कि वह आपकी क़ब्र के पास खड़ा हो, यह तो बाहर से आने वाले आगंतुकों के लिए है”।

यह भी उनका ही कथन है किः “जो व्यक्ति यात्रा से लौट कर आया हो अथवा यात्रा के लिए निकलने वाला हो उसके लिए कोई हर्ज नहीं कि वह नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की क़ब्र के पास खड़ा हो कर आप पर दरूद भेजे एवं आपके लिए तथा अबू बकर व उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा के लिए दुआ करे”।

उनसे कहा गयाः मदीना में कुछ ऐसे लोग हैं जो न तो यात्रा से लौट कर आए होते हैं और न ही यात्रा करने का इरादा रखते हैं फिर भी दिन भर में एक या एक से अधिक बार ऐसा करते हैं, और यदा-कदा जुमा के दिन अथवा किसी और दिन एक बार या दो बार या उससे भी अधिक बार क़ब्र के पास खड़े होते हैं, सलाम करते हैं एवं काफी देर तक दुआ करते रहते हैं।

तो उन्होंने कहाः “हमारे शहर अर्थात मदीना के उलेमा में से किसी ने ऐसा किया हो हमें इसकी सूचना नहीं है, ऐसा नहीं करना ही बेहतर है, और स्मरण रहे कि इस उम्मत के अंतिम लोगों की इस्लाह व सुधार केवल उसी चीज़ के द्वारा संभव है जिसके द्वारा प्रथम लोगों का सुधार हुआ थ, और मेरे ज्ञान की हद तक इस उम्मत के प्रारंभिक दौर के लोग ऐसा नहीं करते थे, और ऐसा करना मकरूह (अप्रिय, अरुचिकर) है सिवाय उसके जो यात्रा करके लौटा हो अथवा यात्रा करने का विचार रखता हो”।

इब्नुल क़ासिम[1] का कथन हैः “मैंने मदीना वासियों को देखा है कि जब वह नगर से बाहर निकलते अथवा नगर में प्रवेश करते तो (नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की) क़ब्र के पास आते तथा सलाम करते, वह कहते हैं : और यह एक राय मात्र है”।

[1] अब्दुर्रह़मान बिन क़ासिम, मिस्र के आलिम व मुफ़्ती हैं, इमाम मालिक की छत्र-छाया में रहे तथा उनसे व अन्य से रिवायतें बयान की हैं, और उनसे भी एक समूह ने रिवायत बयान की है, सन १९१ हिजरी में उनका देहांत हुआ। उनकी जीवनी पढ़ने के लिए देखें: ज़हबी की “सेयरो आलाम अल-नुबला” (९/ १२०)।

टिप्पणीः इब्नुल क़ासिम की प्रकाशित पुस्तक में यह शब्द है : (رأي अर्थात यह एक विचार मात्र है) जब्कि “मजमूअ अल-फ़तावा” (२७/ ११८) के शब्द हैं : (دأبي अर्थात यह मेरा अपना अमल है)।

तथा अल-बाजी[1] का कथन है कि: "इस मसले में मदीना वासी तथा आगंतुक के मध्य अंतर है, क्योंकि आगंतुक इसी उद्देश्य से मदीना आता है जब्कि मदीना वासी यहीं रहते हैं वो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की क़ब्र तथा आप को सलाम करने के उद्देश्य से नहीं आते हैं"। उनका कथन समाप्त हुआ।[2]

इब्ने तैमीय्या रह़िमहुल्लाह ने इस पर टिप्पणी करते हुए लिखा है: "यह मालिक हैं जो अपने युग के सबसे बड़े विद्वान थे -अर्थात तबा ताबेईन के युग में उस मदीना नगरी में जहाँ के लोग सहाबा, ताबेईन तथा तबा ताबेईन के युग में नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की क़ब्र के पास क्या करना मशरूअ है इसके सबसे बड़े जानकार थे- वो लोग आप को सलाम करने के पश्चात दुआ के लिए वहाँ रुकने को मकरूह (अप्रिय) समझते थे, और यह बयान किया है कि मुस्तहब (पुनीत) यह है कि आप (नबी) के लिए तथा आप के दोनों साथियों के लिए दुआ की जाए, तथा दरूद व सलाम के विषय में यही मशरूअ है, और हाँ ज्ञात रहे मदीना वासियों के लिए हर समय ऐसा करना मुस्तहब नहीं है बल्कि यात्रा से लौटने के पश्चात अथवा यात्रा के लिए निकलने के समय, क्योंकि यही आपको सलाम करना है, और वह व्यक्ति जिसको सलाम किया जाता है हर समय उसको सलाम करने के लिए उसके घर नहीं जाया जाता है, यात्रा से लौटने वाले व्यक्ति के विपरीत"।[3]

मैं यह कहता हूँ कि: इमाम मालिक रह़िमहुल्लाह के इस कथन: (नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम, तथा अबू बकर व उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा के लिए दुआ करे) में गहन विचार करने की आवश्यकता है कि, उन्होंने यह नहीं कहा कि स्वयं अपने लिए दुआ करे, क्योंकि शरीअत -ए- इस्लाम में प्रमाणित व प्रचलित मसला यह है कि क़ब्र की ज़ियारत (भ्रमण) करने का उद्देश्य मैय्यित (मृत) के लिए दुआ करना है अपने लिए नहीं, रही बात ज़ायर

---

[1] मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह अल-ख़ौलानी अल-बाजी, इब्नुल क़ौन के नाम से प्रसिद्ध हैं, इशबीलीय्या में आप ठहरे थे, आप इमाम मालिक के मज़हब (पंथ) के अच्छे जानकार थे, आप सच्चे, भले व सज्जन आदमी थे, इनका सन ३०८ हिजरी में देहांत हुआ। उनकी जीवनी पढ़ने के लिए देखें: ज़हबी की "तारीख़ -ए- इस्लाम" (७/ १३८-१३९)।

[2] इमाम मालिक रह़िमहुल्लाह के इन कथनों को क़ाज़ी एयाज़ रह़िमहुल्लाह ने अपनी पुस्तक "अल-शिफा बितारीफ़ हुक़ूक़ अल-मुस्तफा" (२/ ९८-९९) में "नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के क़ब्र की ज़ियारत तथा जिसने आपकी ज़ियारत की और आप को सलाम किया उसकी फ़ज़ीलत, और आप को सलाम करने एवं आपके लिए दुआ करने का ढ़ंग", के अंतर्गत उल्लेख किया है, और इसकी निसबत सरख़्सी की "अल-मब्सूत" की तरफ की है, और इसको इसी रूप में इब्ने तैमीय्या ने भी नक़ल किया है जैसाकि "मजमूअ अल-फ़तावा" (२७/ ११८) में है।

[3] "मजमूअ अल-फ़तावा" (२७/ ११८)।

(भ्रमणकर्ता) की तो क़ब्रिस्तान में प्रवेश करते समय जब वह यह दुआ करता है कि يرحم الله) المستقدمين منا ومنكم والمستأخرين) (अल्लाह तआला हमारे व तुम्हारे बीच से पहले चले गए तथा बाद में आने वाले सभी पर रहम व कृपा करे) तो उसमें वह स्वयं भी सम्मिलित होता है, और उसका क्या उत्तर होगा कि यदि कोई कहे कि क़ब्रों के पास दुआ करने के मसले में मूल बात यह है कि यह तो भ्रमणकर्ता के लिए था तथा वह मैय्यित को भूल गया?

तो इमाम मालिक रहिमहुल्लाह का यह कथन, नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की क़ब्र की ज़ियारत के विषय में है, और इमाम मालिक रहिमहुल्लाह का कथन दूसरों की तुलना में अधिक वज़नी है, नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के युग से बिल्कुल निकट होने के कारण तथा उनके मदीना वासी होने के कारण।[1]

---

[1] अधिक जानकारी के लिए इब्ने तैमीय्या रहिमहुल्लाह ने जो "मज्मू अल-फ़तावा" (२७/ १२९-१३०), तथा "इक़्तेज़ा अल-स़िरात अल-मुस्तक़ीम" (२/ ७२७), में इस मसला पर लिखा है उसको देखें, लेखक के इस कथनः (तीसरा कारणः दुआ के उद्देश्य से वहाँ जाने का मकरूह (अवांछनीय) होना) के बाद से, तथा जो कुछ उनके शिष्य इब्नुल क़ैय्यिम ने "इग़ास़ा अल-लहफ़ान" (पृष्ठः ३६३ ....) में लिखा है।

सारांश

उपरोक्त लेखनी के आधार पर यह स्पष्ट हो गया कि क़ब्रों के पास दुआ करने की शरीअत -ए- इस्लामिया में न तो कोई विशेषता है और न ही इस प्रकार की गई दुआ स्वीकार्य होने के अधिक पात्र है, बल्कि क़ब्र भी शेष धरती के अन्य स्थानों के ही समान है जहाँ दुआ करने की कोई विशेषता व फ़ज़ीलत नहीं है, जैसे नदियों के किनारे, रास्ते का कोना इत्यादि असंख्य स्थान जिनका शुमार केवल अल्लाह तआला ही कर सकता है, तथा जिसे अल्लाह तआला ने कोई विशेषता प्रदान नहीं की है।

अतः पूर्वोल्लेखित बातों से यह प्रमाणित हो गया कि **क़ब्रों के पास जाकर दुआ करने को प्राथमिकता देना बिदअत है,** और यह दावा करना कि वहाँ दुआ करना अफ़ज़ल व श्रेष्ठकर है अल्लाह के बारे में ऐसी बात कहना है जिसका उसे ज्ञान नहीं है, और यह कबीरा गुनाहों में से है, अल्लाह तआला का फ़रमान हैः ﴿قُلۡ إِنَّمَا حَرَّمَ رَبِّيَ ٱلۡفَوَٰحِشَ مَا ظَهَرَ مِنۡهَا وَمَا بَطَنَ وَٱلۡإِثۡمَ وَٱلۡبَغۡيَ بِغَيۡرِ ٱلۡحَقِّ وَأَن تُشۡرِكُواْ بِٱللَّهِ مَا لَمۡ يُنَزِّلۡ بِهِۦ سُلۡطَٰنٗا وَأَن تَقُولُواْ عَلَى ٱللَّهِ مَا لَا تَعۡلَمُونَ﴾[1] (-हे रसूल- आप कह दीजिए कि निस्संदेह मेरे रब ने उन समस्त फ़हश बातों -बदकारियों, अश्लीलताओं व बेहूदापन- को हराम व वर्जित किया है जो स्पष्ट हैं या गुप्त व छिप्त, और गुनाह की हरेक बात को, और नाहक़ व अकारण किसी पर अत्याचार करने को, और इस बात को कि तुम अल्लाह के साथ किसी ऐसी चीज़ को साझी बनाओ जिसकी अल्लाह ने कोई सनद -दलील, आधार- नाज़िल नहीं की और इस बात को कि तुम लोग अल्लाह के ज़िम्मे ऐसी बात लगा दो जिसको तुम जानते नहीं)।

क़ब्रिस्तान की ज़ियारत करने वाले के लिए मशरूअ यह है कि वह क़ब्रिस्तान में दफ़न मुर्दों को सलाम करे, तथा नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से प्रमाणित दुआ करेः (السلام على أهل الديار من المؤمنين والمسلمين، ويرحم الله المستقدمين منا والمستأخرين، وإنا إن شاء الله بكم للاحقون), (अस्सलामो अला अहलिद्दियार मिनल मोमिनीन वलमुस्लिमीन, व यरहमल्लाहु अल-मुस्तक़दिमीन मिन्ना वल मुस्ताख़िरीन, व इन्ना इन शा अल्लाह बिकुम ललाहिक़ून) (हे मोमिन व मुस्लिम घर वालों तुम पर सलामती (शांति) हो, अल्लाह तआला

[1] सूरह अल-आराफ़ः ३३।

हमारे व तुम्हारे बीच से पहले चले गए तथा बाद में आने वाले सभी पर रह़म व कृपा करे, और यदि अल्लाह ने चाहा तो हम भी अति शीघ्र तुमसे भेंट करने वाले हैं)।

बुरैदा अल-असलमी की ह़दीस़ में यह वृद्धि हैः (أسأل الله لنا ولكم العافية), (असअलुल्लाह लना व लकुम अल-आफ़िया) (हम अपने लिए व तुम्हारे लिए अल्लाह से आफियत (माफी व कल्याण) माँगते हैं)।

दुआ के मक़बूल व स्वीकार्य होने के शरई माध्यमों को बयान करने से संबंधित अध्याय

पुस्तक के आरंभ में हमने यह उल्लेख किया है कि अल्लाह तआला ने अपने बंदों की प्रार्थनाओं के स्वीकार्य व मक़बूल होने के लिए कुछ माध्यमों को मशरूअ (शास्त्रसम्मत विधि, विधान) क़रार दिया है, जो व्यक्ति इन माध्यमों को अपनाते हुए तथा इसे प्राथमिकता देते हुए दुआ करेगा तो ऐसी आशा है कि इन शा अल्लाह (यदि अल्लाह ने चाहा तो) उसकी दुआ मक़बूल होगी, निम्न में हम उन माध्यमों व कारणों का एक-एक करके उल्लेख करेंगे, ताकि पाठक ह़क़ व सत्य तथा उसके विपरीत से भली-भांति अवगत हो जाए, यदि हमने बिदई (नवाचारी) माध्यमों को अपनाया तो इसका अर्थ होगा कि हमने शरई माध्यमों को छोड़ दिया और ठीक इसी के विपरीत है कि यदि हमने शरई माध्यमों को अपनाते हुए दुआ किया तो इसका अर्थ होगा कि हमने सुन्नत पर अमल किया, और अल्लाह के आज्ञा व कृपा से हम अपने मामले में बिल्कुल सही व सीधे रास्ते पर हैं।

प्रार्थना के स्वीकार्य (मक़बूल) होने के अस्बाब (माध्यमों एवं कारणों) के छः प्रकार हैं:

प्रथमः वह सबब जो स्वयं प्रार्थी (दुआ करने वाले) से संबंधित है।

द्वितीयः वो अस्बाब (माध्यम) जिनका संबंध उस इबादत व उपासना से है जिसको प्रार्थी अंजाम देता है, और इनकी संख्या नौ (९) है।

तृतीयः वो अस्बाब जो प्रार्थी की दशा व हालत से संबंधित हैं, और इनकी संख्या पाँच (५) है।

चतुर्थः वो अस्बाब जो प्रार्थना के समय काल से संबंधित हैं, और इनकी संख्या पाँच (५) है।

पंचमः सामयिक व स्थानिक अस्बाब, और इनकी संख्या दो (२) है।

षष्ठ व अंतिमः वो अस्बाब जो प्रार्थना के आदाब (शिष्टाचार) से संबंधित हैं, और इनमें मुख्य तेरह (१३) हैं।

पहली क़िस्मः वह सबब जो स्वयं प्रार्थी (दुआ करने वाले) से संबंधित है

यह केवल एक सबब है और वह यह है कि दुआ करने वाला व्यक्ति उन आदेशों का पालन करने वाला हो जिनके अनुपालन का आदेश अल्लाह तआला ने अपने बंदों को दिया है, तथा जिन कार्यों को अल्लाह तआला ने निषिद्ध (ह़राम) किया है उनसे दूर रहने वाला हो, जैसाकि अल्लाह तआला का फ़रमान हैः ﴿وَيَسْتَجِيبُ ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ وَعَمِلُوا۟ ٱلصَّٰلِحَٰتِ وَيَزِيدُهُم مِّن فَضْلِهِۦ﴾[1] (वह ईमान वालों और नेक (भले) लोगों की सुनता है, और उन्हें अपने फ़ज़्ल व कृपा से और बढ़ा कर देता है), अर्थात उन लोगों की प्रार्थनाओं को स्वीकार करता है, यहाँ प्रार्थना के स्वीकार्य होने के लिए ईमान और नेक अमल (सदकर्म) की शर्त लगाई है।

और अल्लाह तआला का फ़रमान हैः ﴿وَإِذَا سَأَلَكَ عِبَادِى عَنِّى فَإِنِّى قَرِيبٌ ۖ أُجِيبُ دَعْوَةَ ٱلدَّاعِ إِذَا دَعَانِ ۖ فَلْيَسْتَجِيبُوا۟ لِى وَلْيُؤْمِنُوا۟ بِى لَعَلَّهُمْ يَرْشُدُونَ﴾[2] (और मेरे बंदे जब मेरे बारे में आप से प्रश्न करें तो आप कह दें कि मैं अत्याधिक निकट हूँ, हरेक पुकारने वाले की पुकार को जब कभी वह मुझे पुकारे, क़बूल करता हूँ, अतः लोगों को भी चाहिए कि वह मेरी बात मान लिया करें और मुझ पर ईमान रखें, यही उनकी भलाई (हित) का कारण है), यहाँ अल्लाह तआला ने अपने उन बंदों के गुणों का उल्लेख किया है जिनकी प्रार्थना वह स्वीकार करता है, और यह बात सर्वविदित है कि बंदों को "इबाद" कह कर इसीलिए संबोधित किया है क्योंकि वो आज्ञापालन करते हैं तथा अवज्ञा से दूर रहते हैं।

माता-पिता के संग अच्छा बर्ताव करना भी प्रशंसनीय सदकर्मों में से है, ताबेईन के युग में उवैस क़रनी नामक एक नेक बुज़ुर्ग थे जो अपनी माता की बड़ी सेवा-आदर किया करते थे, नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने लोगों को उनसे दुआ करवाने की ओर मार्गदर्शित किया था, चुनाँचे उसैर बिन जाबिर का वर्णन है कि उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमायाः मैंने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को फ़रमाते हुए सुनाः "सर्वश्रेष्ठ ताबेईन में से एक ऐसे व्यक्ति हैं जिनका नाम उवैस क़रनी है, उनकी माता जीवित हैं एवं उनके शरीर पर सफेद दाग है, उनसे अनुरोध करना कि वह तुम्हारे लिए मग़फिरत की दुआ (क्षमा याचना) करें"।

---

[1] सूरह शूराः २६।

[2] सूरह बक़रहः १८६।

उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अन्हु के पास यमन वासियों का जब कोई अमदाद[1] (समूह) आता तो वह उनसे पूछतेः क्या तुम्हारे साथ उवैस बिन आमिर हैं? यहाँ तक कि जब उवैस आए तो उनसे कहाः (**आप मेरे लिए मग़फिरत की दुआ कर दें**), तो उन्होंने उनके लिए मग़फिरत की दुआ की।[2]

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उवैस क़रनी का विशेष गुण यह बताया कि वह अपनी माता जी का बड़ा आदर-सत्कार करते हैं, और इसी कारणवश उनके द्वारा की गई दुआ क़बूल की जाती है।

और अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से वर्णित है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः "तीन लोग ऐसे हैं जिनकी प्रार्थना अस्वीकार नहीं होतीः अल्लाह तआला का अधिकाधिक स्मरण (ज़िक्र) करने वाला, मज़लूम (पीड़ित) की बद्दुआ (शाप) तथा न्यायप्रिय राजा"।[3]

इस हदीस़ मे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने स्पष्ट रूप से यह बताया है कि अल्लाह तआला का अधिकाधिक स्मरण करने वाले की प्रार्थना के स्वीकार होने की प्रबल संभावना होती है, क्योंकि वह अल्लाह तआला का आज्ञापालन करने वाला होता है, और इसी प्रकार न्यायप्रिय बादशाह की भी क्योंकि अपनी प्रजा के संबंध में वह अल्लाह के आदेशों का पालन करता है, और यह ऐसा सदकर्म है जिसको तुच्छ नहीं माना जा सकता।

और चूँकि नेक आदमी (महात्मा) की प्रार्थना के स्वीकार्य होने की प्रबल संभावना होती है इसी लिए सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम के ऊपर जब कोई विपदा आती तो वह नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास आकर प्रार्थना करवाते, क्योंकि यह बात तो सर्वविदित है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम सर्वाधिक नेक आदमी व महात्मा थे, ख़ब्बाब बिन अल-अरत रज़ियल्लाहु अन्हु से वर्णित है कि हम नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास अपनी शिकायत लेकर आए जब्कि आप काबा की छाया में अपनी चादर को तकिया बनाकर टेक

---

[1] अरबी भाषा का शब्द "अमदाद" बहूवचन है जिसका एकवचन "मदद" है, यह लड़ने वाले उस समुदाय के लिए प्रयोग किया जाता है जो युद्ध के मैदान में सेना की सहायता करती है। देखेः "शर्ह अल-नौवी अला सहीह मुस्लिम"।

[2] इस हदीस़ को मुस्लिम (२५४२) तथा अहमद (१/ ३८-३९) ने रिवायत किया है।

[3] इस हदीस़ को बैहिक़ी ने "शुअब अल-ईमान" (५८८, ७३५८) में रिवायत किया है, तथा अलबानी ने इसे "सहीहा" (१२११) में हसन क़रार दिया है।

लगाए हुए थे, हमने आपसे निवेदन कियाः क्या आप हमारे लिए सहायता की माँग नहीं करेंगे, **क्या आप हमारे लिए अल्लाह से दुआ नहीं करेंगे**?[1]

सारांश यह है कि दुआ करने वाला (प्रार्थी) जितना अधिक नेक व अपने रब का निकटवर्ती होगा उतना ही उसकी प्रार्थना के स्वीकार्य होने की संभावना प्रबल होगी।

---

[1] इस ह़दीस़ को "बुख़ारी" (३६१२) ने रिवायत किया है।

दूसरी क़िस्मः वो अस्बाब (माध्यम) जिनका संबंध उस इबादत व उपासना से है जिसको प्रार्थी अंजाम देता है, और इसकी संख्या नौ (९) है।

1- **नमाज़ में सलाम फेरने के पूर्व दुआ करना**, अबू उमामा अल-बाहिली रज़ियल्लाहु अन्हु से वर्णति है, वह कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से प्रश्न किया गया, हे अल्लाह के रसूल, कैसी दुआ स्वीकार किए जाने के अधिक पात्र है?

तो आपने फ़रमायाः [1](جوف الليل الآخر، ودبر الصلوات المكتوبات) रात के अंतिम पहर में की गई दुआ, तथा फ़र्ज़ नमाज़ों के अंत में की गई दुआ।

अर्थात नमाज़ में सलाम फेरने के पूर्व की गई दुआ, क्योंकि ह़दीस़ में वर्णित शब्द “दुब्र” कहते हैं किसी चीज़ से जुड़े हुए उसके पिछले भाग को और यहाँ उससे अभिप्राय है सलाम फेरने से पहले का समय क्योंकि यह नमाज़ से जुड़ा हुआ उसका एक अंश है, और इसकी दलील इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु की वह ह़दीस़ भी है जिसमें वह कहते हैं किः (كنت أصلي، والنبي ﷺ وأبو بكر وعمر معه، فلما جلست بدأت بالثناء على الله، ثم الصلاة على النبي ﷺ، ثم دعوت لنفسي، فقال النبي ﷺ: سل تُعطه، سل تعطه) (मैं नमाज़ पढ़ रहा था, और नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तथा उनके संग अबू बकर व उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा वहीं पर थे, जब मैं बैठा[2] तो मैंने अल्लाह तआला की प्रशंसा करने से आरंभ किया, तत्पश्चात नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दरूद भेजा, फिर मैंने अपने लिए दुआ किया, तो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः माँगो दिया जाएगा, (और) माँगो दिया जाएगा)।[3]

इब्नुल क़ैय्यिम रह़िमहुल्लाह कहते हैं: (मेरे शैख़[4] (गुरू) इस को ही वरीयता (तरजीह़) देते थे कि यह सलाम के पूर्व होगा, तो मैंने इसका खंडन किया, इस पर उन्होंने फ़रमाया किः प्रत्येक चीज़ का दुब्र (पिछला भाग) जानवर के दुब्र (पिछला भाग, नितंब) के समान होता है)।[5]

---

[1] इस ह़दीस़ को “तिर्मिज़ी” (३४९९) और नसई ने “कुब्रा” (९८५६) में रिवायत किया है, और अलबानी ने इसे ह़सन कहा है।

[2] अर्थातः मैं तशह्हुद के लिए बैठा।

[3] इस ह़दीस़ को “तिर्मिज़ी” (५९३) ने रिवायत किया है, और अलबानी ने इसे “ह़सन सह़ीह़” कहा है।

[4] अर्थातः इब्ने तैमीय्या रह़िमहुल्लाह।

[5] ज़ाद अल-मआद (१/ ३०५)।

2- **सज्दे की स्थिति में बंदे का दुआ करना:** और इसका प्रमाण नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह फ़रमान है: (وأما السجود فاجتهدوا في الدعاء، فقمن أن يستجاب لكم), "सज्दे की स्थिति में अधिकाधिक दुआ का प्रयास किया करो, क्योंकि इस समय की जाने वाली दुआ स्वीकार किए जाने के अधिक योग्य[1] है"।[2]

अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया: (أقرب ما يكون العبد من ربه وهو ساجد، فأكثروا الدعاء) "बंदा अपने रब के सबसे निकट सज्दा की हालत में होता है, अतः इस स्थिति में ख़ूब दुआ किया करो"।[3]

3- **रोज़ेदार का दुआ करना:** और इसका प्रमाण नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह फ़रमान है: (ثلاث دعوات لا ترد: دعوة الوالد، ودعوة الصائم، ودعوة المسافر) "तीन प्रकार की दुआ रद्द नहीं की जाती: पिता की दुआ, रोज़ेदार की दुआ तथा यात्री की दुआ"।[4]

फ़ायदा: पूर्वोल्लेखित हदीस़ से पता चलता है कि रोज़ेदार की रोज़ा की हालत में की गई दुआ, दुआ के स्वीकार्य होने के कारणों में से एक कारण है, जब्कि लोगों के मध्य यह प्रचलित है कि रोज़ेदार की इफ़्तार के समय की गई दुआ, दुआ के स्वीकार्य होने के कारणों में से एक कारण है, लेकिन जिस हदीस़ के आधार पर यह बात कही जाती है वह ज़ईफ़ (कमज़ोर व आधारहीन) है जिस पर एतमाद करना उचित नहीं है, और वह अब्दुल्लाह बिन अम्र रज़ियल्लाहु अन्हुमा की हदीस़ है, वह कहते हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया: (للصائم عند فطره دعوة مستجابة), "रोज़ा खोलते समय रोज़ेदार के द्वारा की गई

---

[1] अर्थात इसके स्वीकार्य होने की प्रबल संभावना है।

[2] इस हदीस़ को "मुस्लिम" (४७९) आदि ने इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत किया है, तथा अब्दुल्लाह बिन अहमद ने अपने पिता की "मुस्नद" (१/ १५५) में अपनी ओर से वृद्धि करते हुए इसको अली रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है, और "मुस्नद अहमद" की तहक़ीक़ करने वालों (अन्वेषकों) ने इसकी सनद को "हसन लि ग़ैरिही" अर्थात उत्तम कहा है।

[3] इस हदीस़ को "मुस्लिम" (४८२) ने रिवायत किया है।

[4] इस हदीस़ को "बैहिक़ी" (३/ ३४५) ने अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है, और इसकी तख़रीज अल्लामा अलबानी ने "सहीहा" (१७९७) में की है।

दुआ क़बूल की जाती है", चुनाँचे अब्दुल्लाह बिन अम्र रज़ियल्लाहु अन्हुमा जब इफ़्तार करने के लिए बैठते तो अपनी पत्नी व बच्चों को बुलाते और दुआ करते।[1]

4- **हज व उमरा करने वाले (हाजी व मोअतमिर) की दुआ:** नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इस फ़रमान के कारण: (الغازي في سبيل الله، والحاج والمعتمر وفد الله، دعاهم فأجابوه، وسألوه فأعطاهم), "अल्लाह के रास्ते में जिहाद करने वाला, एवं हाजी और मोअतमिर अल्लाह के वफ़्द (प्रतिनिधि) हैं, अल्लाह ने उन्हें बुलाया तो वो दौड़े चले आए, और उन्होंने अल्लाह से माँगा तो अल्लाह ने उनकी माँग को पूरा किया"।[2]

5- **मुल्तज़िम के पास दुआ करना:** यह काबा का वह भाग है जो हजर -ए- असवद से ले कर काबा के द्वार तक फैला हुआ है, और इसको मुलतज़िम इसलिए कहते हैं कि लोग इसका इल्तेज़ाम करते (चिमटते) एवं वहाँ पर दुआ करते हैं, और यहाँ दुआ करना अफ़ज़ल व श्रेष्ठकर है इसकी दलील यह है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपनी छाती, मुख, दोनों बाज़ू तथा हथेलियों को काबा के हजर -ए- असवद वाले कोना से लेकर द्वार तक के भाग पर रखा करते थे[3], अर्थात तवाफ़ में, और आप से यह बात प्रमाणित है कि मक्का विजय के दिन आपने तथा आपके सहाबा ने अपने कपोलों को काबा की दीवार पर रखा और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उन लोगों के बिल्कुल बीच में थे।[4]

तथा मुजाहिद रहिमहुल्लाह कहते हैं कि: मैं इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हुमा के पास आया जब्कि वह रुक्न (हजर -ए- असवद वाला कोना) और द्वार के बीच पनाह व शरण माँग

---

[1] इस ह़दीस़ को "इब्ने माजह" (१७५३), और त़यालिसी ने "मुसनद" (६/ २३७) में रिवायत किया है, और यह शब्द त़यालिसी के ही हैं, और इसके ज़ईफ़ होने के कारणों को "अल-इरवा" (४/ ४१) में देखें।

[2] इस ह़दीस़ को "इब्ने माजह" (२८९३) ने रिवायत किया है, और अलबानी ने "सहीहा" में इसे ह़सन कहा है।

[3] इस ह़दीस़ को "अबू दाऊद" (१८९९), "इब्ने माजह" (२९६२) तथा "बैहिक़ी" (५/ ९३) ने अम्र बिन शुऐब से, उन्होंने अपने पिता से तथा उन्होंने अपने दादा से रिवायत किया है, और "इब्ने माजह" के यहाँ इस शब्द (خديه, दोनों गाल) की वृद्धि है, और अलबानी ने यह अस़र तथा इसके बाद वाले दोनों को ह़सन कहा है, जैसाकि "सहीहा" (२१३८) में उल्लेखित है।

[4] इस ह़दीस़ को "अबू दाऊद" (१८९८), अह़मद (३/ ४३१) तथा बैहिक़ी (५/ ९२) ने रिवायत किया है।

रहे थे।[1]

शैख़ुल इस्लाम इब्ने तैमीय्या रहिमहुल्लाह फ़रमाते हैः “मुझे यह प्रिय है कि कोई मुल्तज़िम (जो हजर -ए- असवद तथा काबा के दरवाज़ा के बीच का भाग है) के पास आए तथा अपनी छाती, मुख, दोनों हथेलियों एवं बाज़ुओं को रखे तथा अल्लाह तआला से दुआ करे एवं अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए दुआ करे, यदि चाहे तो ऐसा करे, और जायज़ है कि ऐसा तवाफ़ -ए- वदाअ (विदाई तवाफ़) के समय करे, या चाहे तो विदाई से पहले इस प्रकार से इल्तेज़ाम के पास दुआ करे अथवा किसी और समय सभी समान हैं इसमें कोई अंतर नहीं, और सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम जब मक्का में प्रवेश करते तो ऐसा करते थे ... और यदि इल्तेज़ाम को छूए बिना द्वार के पास खड़े होकर दुआ करे तो भी ठीक है ...”।[2] उनका कथन समाप्त हुआ।

6- **ज़मज़म का पानी पीते समय दुआ करनाः** जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु की ह़दीस़ के कारण, जिसमें है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः (ماء زمزم لما شرب له), “ज़मज़म का जल पीते समय की गई दुआ स्वीकार्य होती है”।[3]

7- दुआ के स्वीकार्य होने के लिए अल्लाह तआला ने जिन नेक आमाल (सदकर्मों) को मशरूअ (वैध) क़रार दिया है उनमें से एक, **अल्लाह तआला के अस्मा -ए- हुस्ना (अच्छे व प्यारे नामों) तथा उच्च गुणों को वसीला (ज़रिया, माध्यम) बनाते हुआ दुआ करना है,** जैसाकि अल्लाह तआला का फ़रमान हैः ﴿وَلِلَّهِ ٱلۡأَسۡمَآءُ ٱلۡحُسۡنَىٰ فَٱدۡعُوهُ بِهَاۖ﴾[4] (अल्लाह के बड़े अच्छे-अच्छे नाम हैं अतः इन नामों के द्वारा अल्लाह तआला से दुआ करो), उदाहरणस्वरूप इस प्रकार दुआ करे, (हे रह़म करने वाले मुझ पर रह़म कर, हे जीविका देने वाले मुझे जीविका दे, हे क्षमा करने वाले तू मुझे क्षमा कर दे) इत्यादि।

8- दुआ के स्वीकार्य होने के लिए अल्लाह तआला ने जिन नेक आमाल (सदकर्मों) को मशरूअ (वैध) क़रार दिया है उनमें से एक है, **जीवित, उपस्थित एवं दुआ करने में**

---

[1] इस ह़दीस़ को “अब्दुर्रज़्ज़ाक़” (९०४७) ने रिवायत किया है, और अलबानी ने सहीह कहा है जैसाकि अभी हमने इसका उल्लेख किया है।

[2] “मजमू अल-फ़तावा” (२६/ १४२)।

[3] इस ह़दीस़ को “अहमद” (३/ ३५७) तथा “इब्ने माजह” ने रिवायत किया है, और अलबानी ने सहीह कहा है।

[4] सूरह आराफ़ः १८० ।

सक्षम नेक आदमी से दुआ करवाना, वह इस प्रकार कि कोई मुसलमान किसी नेक व दीनदार (भला व धार्मिक प्रवृत्ति वाले) आदमी के पास जाए तथा उससे अनुरोध करे कि उसके अमूक कार्य के लिए वह अल्लाह तआला से दुआ कर दे, जैसे वह यदि विपत्ति में फंसा हुआ है तो यह दुआ करवाए कि अल्लाह तआला उसे इस विपत्ति से छुटकारा दिला दे, या उसके लिए तौफ़ीक़ (अनुग्रह, दैवकृपा) तथा सफलता की दुआ कर दे, यह भी दुआ के स्वीकार योग्य होने के कारणों में से एक कारण है, और इसी लिए सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम पर जब कोई आपदा आती अथवा सुखाड़ आता तो वो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास आकर अपने लिए दुआ करवाते थे, और ऐसा करना चंद सलफ़ (नेक पूर्वजों) से भी प्रमाणित है।

9- दुआ के स्वीकार्य होने के लिए अल्लाह तआला ने जिन नेक आमाल (सदकर्मों) को मशरूअ (वैध) क़रार दिया है उनमें से एक है, **दुआ करने वाले का स्वयं अपने किसी नेक अमल व सदकर्म को वसीला व माध्यम बनाते हुए दुआ करना,** जैसे कहेः हे अल्लाह, मेरे तुझ पर ईमान लाने के कारण, तेरे रसूल का अनुसरण करने के कारण तथा अपने माता-पिता के संग अच्छा बर्ताव करने के कारण, मुझे क्षमा दे दे और मेरे ऊपर दया कर, मैं जिस विपत्ति में फंसा हुआ हूँ मुझे उससे बाहर निकाल दे, मुझे संतान दे, इत्यादि।

और सदकर्मों को वसीला बनाने के मशरूअ (वैध) होने की दलील वो आयात हैं जिनमें अल्लाह तआला ने अपने उन बंदों का उल्लेख किया है जो अल्लाह पर अपने ईमान को वसीला बनाते हुए दुआ करते हैं कि वह उन्हें नरक की यातना से बचा ले जैसे अल्लाह तआला के इस फ़रमान में हैः ﴿رَّبَّنَآ إِنَّنَا سَمِعۡنَا مُنَادِيٗا يُنَادِي لِلۡإِيمَٰنِ أَنۡ ءَامِنُواْ بِرَبِّكُمۡ فَـَٔامَنَّاۚ رَبَّنَا فَٱغۡفِرۡ لَنَا ذُنُوبَنَا وَكَفِّرۡ عَنَّا سَيِّـَٔاتِنَا وَتَوَفَّنَا مَعَ ٱلۡأَبۡرَارِ ١٩٣﴾[1] (हे हमारे रब (प्रभु, पालनहार) हमने सुना कि पुकारने वाला ईमान की ओर बुला रहा है कि लोगों, अपने रब पर ईमान लाओ, तो हम ईमान ले आए, ऐ हमारे रब, तू हमारे पापों को क्षमा कर दे और हमारी बुराईयों को हम से दूर कर दे, और हमारी मौत नेक लोगों के संग कर।

और इसकी एक दलील उन तीन लोगों का किस्सा भी है जिनके गुफा का मुँह एक पत्थर के कारण बंद हो गया था तो उन्होंने अपने-अपने नेक आमाल को वसीला व माध्यम बनाया था, पहले ने माता-पिता के संग अच्छा बर्ताव करने को वसीला बनाया, दूसरे ने व्यभिचार से

[1] सूरह आल -ए- इमरानः १९३ ।

बच जाने को वसीला बनाया तथा तीसरे ने व्यवहार में अमानतदारी (सत्यनिष्ठा) को वसीला बनाया तो उनके गुफा के मुख से पत्थर सरक गया और वो बाहर निकल आए, और उनका यह वृत्तांत सहीहैन (बुख़ारी व मुस्लिम) में अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा से वर्णित है।[1]

1 "बुख़ारी" (२२१५) व "मुस्लिम" (२७४३)।

तीसरी क़िस्म: वो अस्बाब जो प्रार्थी की दशा व हालत से संबंधित हैं, और इनकी संख्या पाँच (५) है।

1- **मज़लूम (पीड़ित, त्रस्त) की बद्दुआ (हाय, शाप)**: नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के उस फ़रमान के कारण जो उन्होंने मुआज़ रज़ियल्लाहु अन्हु को यमन भेजते समय कहा था: (واتق دعوة المظلوم، فإنه ليس بينها وبين الله حجاب)[1], "मज़लूम अर्थात सताए हुए की बद्दुआ से बचना, क्योंकि उसके तथा अल्लाह के बीच कोई आड़ नहीं होती"।

2- **पिता की दुआ अथवा बद्दुआ उसकी संतान के लिए:** और इसका प्रमाण नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह फ़रमान है: (ثلاث دعوات لا ترد: دعوة الوالد، ودعوة الصائم، ودعوة المسافر)[2], "तीन प्रकार की दुआ रद्द नहीं की जाती: पिता की दुआ, रोज़ेदार की दुआ तथा यात्री की दुआ"।

एवं नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का फ़रमान है: (ثلاث دعوات مستجابات لا شك فيهن: دعوة الوالد، ودعوة المسافر، ودعوة المظلوم), "तीन प्रकार की प्रार्थनाएं निःसंदेह स्वीकार की जाती हैं: पिता की दुआ, यात्री की दुआ तथा मज़लूम की बद्दुआ"।

और तिर्मिज़ी की रिवायत में इस प्रकार है: (دعوة المظلوم، ودعوة المسافر، ودعوة الوالد على ولده)[3], "मज़लूम की बद्दुआ, मुसाफ़िर की दुआ तथा पिता की अपने संतान के लिए की गई बद्दुआ"।

3- **मुसाफ़िर की दुआ:** और इसकी दलील उपरोक्त दोनों ह़दीस़ें हैं।

4- **एक मुसलमान की अपने दूसरे मुसलमान भाई के लिए उसके पीठ पीछे (अनुपस्थिति में) दुआ करना:** अबू दर्दा रज़ियल्लाहु अन्हु से वर्णित उस ह़दीस़ के कारण जिसमें वह कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने

---

[1] इस ह़दीस़ को "बुख़ारी" (१४९६) व "मुस्लिम" (१९) ने रिवायत किया है।

[2] इस ह़दीस़ को "बैहिक़ी" (३/ ३४५) ने अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है, और इसकी तख़रीज अल्लामा अलबानी ने "सहीहा" (१७९७) में किया है।

[3] इस ह़दीस़ को "अबू दाऊद" (१५३६) तथा "तिर्मिज़ी" (१९०५) ने अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है, और अलबानी ने इसे ह़सन कहा है।

फ़रमायाः [1](ما من عبد مسلم يدعو لأخيه بظهر الغيب إلا قال الملك: ولك بمثل), "जो कोई मुस्लिम अपने मुस्लिम भाई के लिए उसकी अनुपस्थिति में कोई दुआ करता है तो फरिश्ता कहता हैः तुमको भी उतना ही मिले"।

और अहमद के शब्द इस प्रकार हैं: [2](آمين، ولك بمثل), "आमीन, -अल्लाह इसे क़बूल करे- और तेरे लिए भी उसी के समान"।

5- **मुर्गा के बाँग देते समय दुआ करनाः** इस ह़दीस़ के कारणः (إذا سمعتم صياح الديكة فاسألوا الله من فضله، فإنها رأت ملكا، وإذا سمعتم نهيق الحمار فتعوذوا بالله من الشيطان فإنها رأت شيطانا)[3], "जब तुम मुर्गा की बाँग सुनो तो अल्लाह तआला से उसका फ़ज़्ल व कृपा माँगो, क्योंकि उसने फरिश्ते को देखा है, और जब तुम गधा के रेंकने की आवाज़ सुनो तो शैतान से अल्लाह की पनाह व शरण माँगो क्योंकि उसने शैतान को देखा है"।

टिप्पणी:

बारिश होते समय दुआ करने की फ़ज़ीलत एक ह़दीस़ में वर्णित हुई है जिसे अबू दाऊद, बैहिक़ी और इब्ने अबी आसिम ने मूसा बिन याक़ूब अल-ज़मई से रिवायत किया है, उन्होंने अबू हाज़िम और उन्होंने सह्ल बिन साद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है, वह कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः (ثنتان لا تردان، أو قلما تردان: الدعاء عند النداء، وحين البأس حين يلحم بعضه بعضا), "दो (प्रकार की दुआएं) रद्द नहीं की जातीं या फिर बहुत कम रद्द की जाती हैं: अज़ान के समय की जाने वाली दुआ, तथा द्वंद्वयुद्ध के समय की जाने वाली दुआ कि जब दोनों ओर की सेना एक-दूजे में गुत्थमगुत्था हों"।

---

[1] इसे "मुस्लिम" (२७३२) ने रिवायत किया है, तथा यह शब्द भी उसी के हैं, और इस क़िस्सा को विस्तृत रूप से पढ़ने के लिए देखें "मुसनद अह़मद" (६/ ४५२) को।

[2] इस ह़दीस़ को इमाम अह़मद ने "मुसनद" (६/ ४५२) में रिवायत किया है।

[3] इस ह़दीस़ को इमाम बुख़ारी (३३०३) व इमाम मुस्लिम (२७२९) ने अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है।

मूसा कहते हैः मुझसे रुज़ैक़ बिन सईद बिन अब्दुर्रहमान ने, उन्होंने अबू हाज़िम से, उन्होंने सह्ल बिन साद से और उन्होंने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रिवायत किया है किः (و وقت المطر), “और बारिश के समय भी”।[1]

यह ह़दीस़ मुन्कर (दूसरी सह़ीह़ ह़दीस़ के विरुद्ध ज़ईफ़ व कमज़ोर) है, क्योंकि (मूसा बिन याक़ूब अल-ज़मई) की याद्दाश्त (स्मरण शक्ति) कमज़ोर व क्षीण है, और उन्होंने इमाम मालिक -जैसाकि अभी आने वाला है- की रिवायत के विपरीत इसको रिवायत किया है, अतः इसको मरफ़ूअ (नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से) रिवायत करना मुन्कर है।

और उनके गुरू रुज़ैक़ बिन सईद बिन अब्दुर्रहमान अल-मदनी भी मजहूल (अज्ञात) हैं, और उन्होंने इमाम मालिक की रिवायत के विपरीत इस शब्द (ووقت المطر), “और बारिश के समय भी”) की वृद्धि कर दी है, जब्कि इमाम मालिक ने मुवत्ता में “किताबुस्सलात” के अंदर “नमाज़ के लिए अज़ान देने के विषय में” अध्याय के अंतर्गत इस ह़दीस़ को अबू ह़ाज़िम बिन दीनार से और उन्होंने सह्ल बिन साद अल-सादी से रिवायता किया है कि उन्होंने ऐसा कहा, फिर ह़दीस़ का उल्लेख किया, अर्थात इस ह़दीस़ को नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रिवायत करने के स्थान पर उस सहाबी का कथन होने को दर्शाया है, **एवं उन्होंने इस शब्द** ووقت) المطر, “और बारिश के समय भी”) **का भी उल्लेख नहीं किया है।**

इसी प्रकार से इस ह़दीस़ को बैहिक़ी ने “सुनन अल-कुब्रा”[2] में इमाम मालिक की सनद से रिवायत किया है और उसके पश्चात कहा हैः “इस ह़दीस़ को अल-ज़मई ने मरफ़ूअ रिवायत किया है जब्कि इमाम मालिक बिन अनस ने मौक़ूफ़ (सहाबी का कथन) रिवायत किया है”।

इस ह़दीस़ को शैख़ अलबानी रह़िमहुल्लाह ने सहीह क़रार दिया है, अल्लाह ही बेहतर जानता है कि उन्होंने किस आधार पर इसको सहीह क़रार दिया है, अधिक जानकारी के लिए देखें: “सहीह अबू दाऊद अल-कबीर”।[3]

दूसरी टिप्पणीः

[1] इसे अबू दाऊद (२५४०) और बैहिक़ी (१/ ४१०) तथा इब्ने अबी आसिम ने “अल-जिहाद” (संख्यांकः ८१, १९) में रिवायत किया है, और इस अंतिम पुस्तक की तह़क़ीक़ मुसाइद अल-राशिद ने की है तथा इसका प्रकाशनः मकतबा अल-उलूम व अल-ह़िकम, मदीना ने किया है।

[2] (१/ ४१०)।

[3] (७/ २९४-२९५)।

कुछ उलेमा से वर्षा होते समय दुआ करने के मुस्तह़ब (पुनीत) होने का कथन नक़ल किया गया है, तो संभवतः उन्होंने इस विषय में वर्णीत ज़ईफ़ (कमज़ोर) ह़दीसों के आधार पर ऐसा कहा होगा, और ऐसा कहने वालों में इब्ने तैमीय्या रह़िमहुल्लाह भी हैं, चुनाँचे उनका कथन है किः "वर्षा होते समय दुआ करना मुस्तह़ब है"।[1]

और इब्नुल क़ैय्यिम रह़िमहुल्लाह कहते हैं : "मैंने अनेक उलेमा से सुन कर यह याद किया है कि बारिश होते समय तथा नमाज़ की इक़ामत के समय की गई दुआ स्वीकार्य होती है"।[2]

और अधिक जानकारी के लिए देखें : "सहीहा"[3]।

---

[1] देखें : "मजमूअ अल-फ़तावा" (२७/ १२९)।

[2] "ज़ाद अल-मआद" (१/ ४६१)।

[3] संख्यांक (१४६९)।

ध्यान दें: इस टिप्पणी तथा इसके पहले वाली टिप्पणी में उक्त समस्त ह़दीसों के उल्लेखित फ़ायदों से मुझे शैख़ अह़मद बिन अली अल-रदाई अल-यमनी ह़फ़िज़हुल्लाह ने अवगत कराया है।

चौथी क़िस्म: वो अस्बाब जो प्रार्थना के समय से संबंधित हैं, और इनकी संख्या पाँच (५) है।

1- जुमा के दिन फ़ज़ीलत वाली घड़ी में दुआ करना: अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से वर्णित है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जुमा के दिन का ज़िक्र किया और फ़रमाया: (فيه ساعة لا يوافقها عبد مسلم وهو قائم يصلي، يسأل الله تعالى شيئا؛ إلا أعطاه إياه. وأشاره بيده يُقلِّلها[1]) "इस दिन एक ऐसी घड़ी होती है कि उस घड़ी में कोई मुस्लिम बंदा खड़ा हो कर नमाज़ पढ़ (दुआ कर) रहा होता है और अल्लाह से कुछ माँगता है तो अल्लाह तआला उसे वह चीज़ प्रदान कर देता है"।

और आपने अपने हाथ के द्वारा सांकेतिक भाषा में इसकी अल्पता व कम होने की ओर इशारा फ़रमाया।

और यह अल्प समय कौन सा है इसको निर्धारित करने के विषय में दो ह़दीसें अवतरित हुई हैं, प्रथम ह़दीस़ अबू मूसा अशअरी रज़ियल्लाहु अन्हु की है, वह कहते हैं कि: "मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को फ़रमाते हुए सुना: (هي ما بين أن يجلس الإمام إلى أن تُقضى الصلاة[2]), "यह इमाम के मिंबर (मंच) पर बैठने से लेकर नमाज़ समाप्त होने तक का समय है"।

और द्वितीय ह़दीस़ जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हुमा की है वह नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रिवायत करते हुए कहते हैं कि आपने फ़रमाया: (يوم الجمعة اثنا عشرة ساعة، فيها ساعة لا يوجد فيها عبد مسلم يسأل الله شيئا إلا آتاه إياه، فالتمسوها آخر ساعة بعد العصر[3]) "जुमा के दिन बारह घंटे होते हैं, जिन में एक घंटा ऐसा होता है कि उस घड़ी में मुस्लिम बंदा अल्लाह

[1] इस ह़दीस़ को बुख़ारी (९३५) व मुस्लिम (८५२) ने रिवायत किया है।

[2] इसे मुस्लिम (८५३) ने रिवायत किया है, और इस ह़दीस़ को रिवायत करने के कारण उनकी आलोचना यह कह कर की गई है कि यह ह़दीस़ मुज़तरिब व मुंक़तअ (ज़ईफ़ व कमज़ोर ह़दीस़ का एक प्रकार) है, अधिक जानकारी के लिए देखें दारक़ुतनी की किताब "अल-ततब्बुअ" (पृष्ठ: २७३), तह़क़ीक़ व दिरासह (शोध व अध्ययन): मुक़बिल बिन हादी अल-वादई, और ये पुस्तकें भी देखें: शैख़ रबी अल-मदख़ली की "बैनल इमामैन मुस्लिम व दारक़ुतनी" (पृष्ठ: २१६), और इब्ने ह़जर रह़िमहुल्लाह की "फ़त्हुलबारी" हदीस संख्या (९३५) की व्याख्या के अंतर्गत, और उनका समर्थन अलबानी ने भी किया है जैसाकि "ज़ईफ़ अबू दाऊद अल-कबीर" (९/ ३९७-३९८) में है।

[3] इस ह़दीस़ को अबू दाऊद (१०४८) व नसई (१३८८) ने रिवायत किया है और उक्त शब्द भी उन्हीं के हैं, और अलबानी ने इसे सहीह कहा है।

तआला से जो कुछ माँगता है वह उसे अता कर देता है, अतः इस घड़ी को अस्र के बाद के अंतिम समय में तलाश करो"।

इब्नुल क़ैय्यिम रहि़महुल्लाह "ज़ाद अल-मआद" में लिखते हैं:

इन कथनों में सबसे सटीक दो कथन हैं जो सही ह़दीस़ से प्रमाणित हैं, और उन दोनों में से एक कथन दूसरे कथन की तुलना में अधिक सटीक है।

प्रथम कथनः इमाम के मिम्बर (मंच) पर बैठने से ले कर नमाज़ समाप्त होने तक का समय है, और इसकी दलील अबू मूसा रज़ियल्लाहु अन्हु वाली ह़दीस़ है।

द्वितीय कथनः वह समय अस्र के बाद है, और यह सबसे सटीक बात है, और यही कथन हैः अब्दुल्लाह बिन सलमा, अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हुमा, इमाम अहमद रहि़महुल्लाह एवं उलेमा के एक बड़े समूह का, और इस कथन की दलील है अबू सईद और अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हुमा की वह ह़दीस़ जिसे अहमद ने "मुसनद"[1] में रिवायत किया है, और जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु की ह़दीस़।

और सईद बिन मंसूर ने अपने "सुनन" में अबू सलमा बिन अब्दुर्रहमान से रिवायत किया है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सहाबा का एक समूह एक स्थान पर एकत्रित हुआ और उन्होंने जुमा के दिन के उस विशेष घड़ी के विषय में चर्चा किया, और जब उनके जाने का समय हुआ तो सभी इस बात पर सहमत हो चले थे कि वह विशेष घड़ी जुमा के दिन अंतिम समय में होती है।[2]

इसके पश्चात इब्नुल क़ैय्यिम रहि़महुल्लाह फ़रमाते हैं : "यही कथन अधिकतर सलफ़ का है, और अधिकांश ह़दीसें इसी को प्रमाणित करती हैं, और इस के सबसे निकट कथन नमाज़ के समय वाला है, और इसके अतिरिक्त जितने कथन हैं उनकी कोई दलील नहीं है।

और मेरा अपना यह मानना है नमाज़ के समय वाली घड़ी भी ऐसी घड़ी है जिसमें प्रार्थना के स्वीकार्य होने की आशा की जाती है, अर्थात दोनों घड़ी ऐसी है जिसमें प्रार्थना के स्वीकार्य होने की आशा है, यद्यपि अस्र के बाद वाला जो समय है वह प्रथम की तुलना में अति विशिष्ट है, यह दिन भर में एक निश्चित समय है जो आगे पीछे नहीं होता, जब्कि नमाज़ के समय जो घड़ी होती है वह नमाज़ के अधीन है, अर्थात नमाज़ पढ़ने के समय के हिसाब से आगे पीछे

---

[1] (२/ २७२)।

[2] अलबानी ने इसे सहीह कहा है, जैसाकि "ज़ईफ़ अबू दाऊद अल-कबीर" (९/ ३९८) में है।

होती रहती है, क्योंकि मुसलमानों का एक स्थान पर एकत्रित होना, उनका इस प्रकार इकट्ठा होकर नमाज़ पढ़ना, विनती करना तथा अल्लाह तआला के समक्ष गिड़गिड़ाना, इन सब चीज़ों का उसके स्वीकार्य होने में बड़ा प्रभाव पड़ता है, अतः उनके एक साथ इकट्ठा होने की घड़ी ऐसी घड़ी है जिसमें प्रार्थना के स्वीकार्य होने की संभावना होती है। तथा इस तरह से समस्त ह़दीसों के मध्य संतुलन भी बन जाता है। और इस प्रकार से यह बात सामने आई कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपनी उम्मत को इन दोनों घड़ियों में अल्लाह से विनती करने के लिए प्रोत्साहित किया है"।[1]

इस आधार पर अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु वाली प्रथम ह़दीस़ में नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के फ़रमानः (قائم يصلي, खड़े होकर नमाज़ पढ़ रहा होता है) का अर्थ होगाः दुआ कर रहा होता है, क्योंकि अरबी शब्द "सलात" दुआ के अर्थ में भी प्रयोग किया जाता है, जैसे अल्लाह तआला का फ़रमान हैः ﴿وَصَلِّ عَلَيۡهِمۡۖ إِنَّ صَلَوٰتَكَ سَكَنٞ لَّهُمۡۗ﴾[2] (आप उनके लिए सलात (अर्थात दुआ[3]) कीजिए, निःसंदेह आपकी सलात (दुआ) उनके लिए इत्मीनान व शांति का कारण है)।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के कथनः (قائم يدعو, खड़े होकर दुआ करता है), का अर्थ है कि वह अनवरत दुआ करता रहता है, इसका कदापि यह अर्थ नहीं है कि वह अपने शरीर को खड़ा रख कर उसी खड़ा होने की मुद्रा में दुआ करता है।

2- मध्य रात्रि में दुआ करनाः जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु की उस ह़दीस़ के कारण जिसमें वह कहते हैं कि मैंने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को फ़रमाते हुए सुनाः (إن في الليل لساعة، لا يوافقها رجل مسلم يسأل الله خيرا من أمر الدنيا والآخرة إلا أعطاه إياه، وذلك كل ليلة[4]) "रात्रि में एक ऐसी घड़ी होती है जिसमें कोई मुस्लिम बंदा यदि अल्लाह तआला से दुनियाँ व आख़िरत (लोक परलोक) से संबंधित किसी भलाई का सवाल करता है तो अल्लाह तआला उसे वह दे देता है, और ऐसा हरेक रात में होता है"।

[1] देखें: "ज़ाद अल-मआद" (१/ ३८८-३९४), थोड़े से संशोधन के साथ संक्षेप में।

[2] सूरह अत्तौबाः १०३ ।

[3] आयत की तफ़्सीर व व्याख्या "तफ़्सीर -ए- इब्ने जरीर" में देखें।

[4] इस ह़दीस़ को मुस्लिम (७५७) ने रिवायत किया है।

और अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से वर्णित है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया: (ينزل ربنا تبارك وتعالى كل ليلة إلى السماء الدنيا حين يبقى ثلث الليل الآخر، يقول: من يدعوني فأستجيب له، من يسألني فأعطيه، من يستغفرني فأغفر له[1]) "हमारा रब प्रत्येक रात्रि को जब रात्रि का अंतिम तीसरा पहर होता है तो सांसारिक आकाश पर पधारता है और फ़रमाता है: "कौन है मुझे पुकारने वाला जिसकी पुकार को मैं सुनूँ, कौन है जो मुझसे माँगे तो मैं उसकी माँग पूरी करूँ, कौन है जो मुझसे मग़फिरत माँगे अर्थात क्षमा याचना करे मैं उसको माफ़ कर दूँ"।

और इन दोनों ह़दीसों के मध्य इस प्रकार से संतुलन बनाया जा सकता है कि रात के तीसरे पहर वाले समय में उस मुबारक व शुभ घड़ी के होने की सबसे प्रबल संभावना होती है।

3 – **रात्रि में जाग कर दुआ करना**, यह पहले वाले की तुलना में आम व व्यापक है, इससे पहले वाले में विशेष रूप से मध्य रात्रि में दुआ करने का उल्लेख है जब्कि इसमें रात्रि के किसी भी भाग में दुआ करने का उल्लेख है, और इसकी दलील उबादा बिन स़ामित रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया: "जो रात में जाग्रत हो और यह पढ़े: (لا إله إلا الله وحده لا شريك له، له الملك وله الحمد وهو على كل شيء قدير، الحمد لله وسبحان الله ولا إله إلا الله والله أكبر، ولا حول ولا قوة إلا بالله), (ला इलाहा इल्लल्लाहु, वहदहू ला शरीका लहु, लहुल-मुल्को व लहुल-हम्दु, व हुवा अला कुल्लि शैइन क़दीर, अल-ह़म्दुलिल्लाहि, व सुब्हानल्लाहि व ला इलाहा इल्लल्लाह, वल्लाहु अकबर, व ला हौला व ला क़ुव्वता इल्ला बिल्लाहलि अलिय्यिल अज़ीम,) (अल्लाह के सिवाय कोई सच्चा माबूद (पूज्य, उपास्य) नहीं, वह अकेला है, उसका कोई साझीदार नहीं, उसी की बादशाहत (राजत्व, शासन, प्रभुत्व) है और उसी के लिए समस्त प्रकार की प्रशंसा है तथा वह हर चीज़ पर क़ुदरत रखने वाला है अर्थात सामर्थ्यवान व सक्षम है, अल्लाह के लिए हर प्रकार की प्रशंसा है, वह पाक व पवित्र है, और अल्लाह के सिवाय कोई सच्चा पूज्य नहीं, वह सबसे बड़ा है, और अल्लाह की शक्ति व सामर्थ्य के बिना हम किसी चीज़ को अंजाम देने में सक्षम नहीं हैं, और फिर यह कहा: (اللهم اغفر لي) (अल्लाहुम्मग़फ़िर ली) हे अल्लाह,

[1] इसे बुख़ारी (११४५) व मुस्लिम (७५८) ने रिवायत किया है।

तू मुझे क्षमा कर दे, या फिर कोई दुआ करे तो उसकी दुआ क़बूल की जाती है, और यदि वुज़ू करके नमाज़ पढ़े तो उसकी नमाज़ क़बूल की जाती है)"।[1]

अबू उमामा अल-बाहिली रज़ियल्लाहु अन्हु का वर्णन है, वह कहते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को फ़रमाते हुए सुनाः (من أوى إلى فراشه طاهرا يذكر الله (حتى يدركه النعاس[2])؛ لم يتقلب ساعة من الليل سأل الله شيئا من أمر الدنيا والآخرة إلا أعطاه إياه[3]) "जो पाक व पवित्र हो कर बिस्तर पर आता है तथा अल्लाह का ज़िक्र व स्मरण करता रहता है (यहाँ तक कि उसे ऊँघ आने लगे), तो रात्रि के किसी भी भाग में यदि वह अल्लाह तआला से दुनियाँ व आख़िरत (लोक परलोक) से संबंधित कोई दुआ करता है तो अल्लाह उसे वह चीज़ प्रदान कर देता है"।

4- **रमज़ान मास में दुआ करनाः** इस हदीस़ के कारणः (إن لله عتقاء في كل يوم وليلة، لكل عبد منهم دعوة مستجابة[4]), "हरेक दिन व रात अल्लाह तआला जहन्नम से क़ैदियों को रिहा करता है, और हरेक दिन व रात में रोज़ेदार की एक दुआ अवश्य स्वीकार की जाती है"।
5- **अज़ान व इक़ामत के मध्य दुआ करनाः** अनस बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु से वर्णित है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः (لا يُرد الدعاء بين الأذان والإقامة[5]), "अज़ान व इक़ामत के मध्य की गई दुआ रद्द नहीं की जाती"।

और अम्र बिन आस़ रज़ियल्लाहु अन्हु के अस़र (हदीस़) में है कि एक व्यक्ति ने कहाः "हे अल्लाह के रसूल, मुअज़्ज़िनों को हम पर वरीयता प्राप्त है, तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि

---

[1] इसे बुख़ारी (११५४) ने रिवायत किया है।

[2] कोष्ठक में उल्लेखित शब्दों को अलबानी रह़िमहुल्लाह ने "अल-कलिम अल-त़य्यिब" (संख्यांकः ४३) में ज़ईफ़ क़रार दिया है, प्रकाशकः मकतबा अल-मआरिफ़- रियाज़।

[3] इस हदीस़ को अबू दाऊद (५०४२), तिर्मिज़ी (३५२६) और नसई ने "कुब्रा" (१०५७३) में रिवायत किया है, तथा अलबानी ने इसे सहीह कहा है।

[4] अर्थात रमज़ान महीना में।

[5] इसे अहमद ने "मुसनद" (२/ २५४) में रिवायत किया है, और "मुसनद" के शोधकर्ताओं (१२/ ४२०) ने कहा है किः इसकी सनद शैख़ैन अर्थात बुख़ारी व मुस्लिम की शर्तों के अनुसार सहीह है, और बज़्ज़ार ने भी इसे अपनी सनद से रिवायत किया है जैसाकि "कश्फ़ अल-अस्तार" (९६२) में वर्णित है, और अलबानी ने इसे "स़हीहुत्तर्ग़ीब" (१००२) में "स़हीह लि ग़ैरिहि" कहा है।

व सल्लम ने फ़रमायाः (قل كما يقولون، فإذا انتهيت فسَلْ تُعطه[1]) "जैसा वो कहते हैं तुम भी वैसा ही कहो, और जब अज़ान समाप्त हो जाए तो (जो माँगना हो) माँगो तुझे दिया जाएगा"।

[1] इस ह़दीस़ को अबू दाऊद (५३४) ने रिवायत किया है, और अलबानी ने इसे "ह़सन स़ह़ीह़" कहा है।

पाँचवी क़िस्मः सामयिक व स्थानिक अस्बाब, और इनकी संख्या दो (२) है।

1– **अरफ़ा के दिन हाजियों का दुआ करनाः** इस ह़दीस़ के कारणः (خير الدعاء دعاء يوم عرفة)[1] "सबसे उत्तम दुआ अरफ़ा के दिन की दुआ है"।

2– **हाजियों का मशअर -ए- ह़राम में ईद वाले दिन की सुबह में दुआ करनाः** और मशअर -ए- ह़राम मिना की ओर से मुज़दलिफ़ा की तरफ़ स्थित है, और इसकी दलील नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हज का विवरण बयान करने वाली जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु की ह़दीस़ है, जिसमें है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुज़दलिफ़ा में रात बिताया, जब सुबह की नमाज़ पढ़ाई तो अपनी ऊँटनी पर सवार हो कर मशअर -ए- ह़राम आए, क़िबला की ओर रुख़ किया, फिर आपने दुआ किया, और तकबीर (अल्लाहु अकबर), तहलील (लाइलाहा इल्लल्लाह) और अल्लाह की तौह़ीद बयान की, आप खड़े होकर इसी प्रकार से करते रहे यहाँ तक कि अच्छे से उजाला फैल गया।[2]

अतः नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का अनुसरण करते हुए उस समय व उस स्थान पर दुआ करना सुन्नत है तथा यदि अल्लाह ने चाहा तो उस दुआ के स्वीकार्य होने की प्रबल संभावना भी है।

[1] इस ह़दीस़ को तिर्मिज़ी (३५८५) ने रिवायत किया है, और अलबानी ने इसे ह़सन कहा है।

[2] इस ह़दीस़ को मुस्लिम (१२१८) ने रिवायत किया है।

छठी क़िस्मः वो अस्बाब जो प्रार्थना के आदाब (शिष्टाचार) से संबंधित हैं, और इनमें प्रमुख तेरह (१३) हैं।

1- **सदा अल्लाह तआला से अच्छा गुमान रखना और प्रार्थना स्वीकार्य होने की आशा रखनाः** इस ह़दीस़ के कारणः (ادعو الله وأنتم موقنون بالإجابة) "तुम अल्लाह से इस उम्मीद के साथ दुआ करो कि तुम्हारी दुआ अवश्य स्वीकार की जाएगी"[1], अर्थात अल्लाह तआला तुम्हें निराश नहीं करेगा, और यह उसी समय होगा जब दुआ करने वाला सम्पूर्ण रूप से आशान्वित होकर निश्छल भाव से दुआ करे, क्योंकि यदि वह सम्पूर्ण रूप से आशान्वित नहीं होगा तो दुआ करने में विनती व अनुनय भाव उत्पन्न नहीं होगा, क्योंकि हृदय राजा है और शरीर के बाकी अंग उसके गुलाम।

और नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ह़दीस़ है कि अल्लाह तआला फ़रमाता हैः (أنا عند ظن عبدي بي، وأنا معه إذا ذكرني), "मैं बंदे के गुमान के अनुसार होता हूँ, तथा मैं उसके संग होता हूँ जब वह मेरा स्मरण करता है"[2], और मुस्लिम की एक रिवायत में इस प्रकार है किः (وأنا معه إذا دعاني), "जब वह मुझे पुकारता है तो मैं उसके संग होता हूँ"।[3]

2- **गिड़गिड़ाते हुए, विनती करते हुए, निश्छलता तथा मिन्नत भाव के साथ दुआ करनाः** क्योंकि इख़्लास़, सच्चाई, निश्छलता तथा विनम्रता एवं ख़ाकसारी क़बूलियत की कुंजी हैं, अल्लाह तआला के इस फ़रमान पर अमल करते हुएः ﴿ٱدۡعُواْ رَبَّكُمۡ تَضَرُّعٗا وَخُفۡيَةً﴾ (तुम अपने रब से दुआ करो गिड़गिड़ा कर भी और चुपक-चुपके भी)।[4]

और अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत है वह कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः "जब किसी को कोई दुःख तथा निराशा हो और यह दुआ पढ़ेः

---

[1] इस ह़दीस़ को तिर्मिज़ी (३४७९) तथा ह़ाकिम (१/ ४९३) ने अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है, और अलबानी ने "सहीहह" (५९४) में इसे ह़सन क़रार दिया है।

[2] इस ह़दीस़ को बुख़ारी (७४०५) व मुस्लिम (२६७५) ने अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है।

[3] सहीह मुस्लिम (२६८५)।

[4] सूरह आराफ़ः ५५ ।

(اللَّهُمَّ إِنِّي عَبْدُكَ، وَابْنُ عَبْدِكَ، وَابْنُ أَمَتِكَ، نَاصِيَتِي بِيَدِكَ، مَاضٍ فِيَّ حُكْمُكَ، عَدْلٌ فِيَّ قَضَاؤُكَ، أَسْأَلُكَ بِكُلِّ اسْمٍ هُوَ لَكَ، سَمَّيْتَ بِهِ نَفْسَكَ، أَوْ أَنْزَلْتَهُ فِي كِتَابِكَ، أَوْ عَلَّمْتَهُ أَحداً مِنْ خَلْقِكَ، أَوِ اسْتَأْثَرْتَ بِهِ فِي عِلْمِ الغَيْبِ عِنْدَكَ، أَنْ تَجْعَلَ القُرْآنَ رَبِيعَ قَلْبِي، وَنُورَ صَدْرِي، وَجَلاءَ حُزْنِي وَذَهَابَ هَمِّي)

(अल्लाहुम्मा इन्नी अब्दुक, वब्नु अब्दिक, वब्नु अमतिक, नासियती बियदिक, माज़िन फ़ीय्या हुक्मुक, अदलुन फ़ीय्या क़ज़ाउक, असअलुक बिकुल्लि इस्मिन हुवा लक, सम्मैता बिहि नफ़्सक, औ अनज़लतहु फ़ी किताबिक, औ अल्लमतहु अहदम मिन ख़लक़िक, औ इस्तास़रता बिहि फ़ी इल्मिल ग़ैबि इन्दक, अन तजअलल क़ुरआन रबीआ क़लबी, व नूर स़दरी, व जलाअ हुज़्नी व ज़हाब हम्मी) (अर्थात, हे अल्लाह मैं तेरा बंदा हूँ, तेरे बंदे (भक्त) का बेटा हूँ, तेरे बांदी (भक्तनि) का बेटा हूँ, मेरा माथा तेरे हाथ में है, तेरा आदेश मुझ में जारी है, मेरे बारे में तेरा फ़ैसला न्याय आधारित है, मैं तुझ से हर उस नाम के साथ माँगता हूँ जो तेरा है, जिसके द्वारा तूने अपना नाम रखा है, या तूने उसे अपनी किताब में उतारा है या उसे अपनी मख़लूक़ (रचना) में से किसी को सिखाया है, या उसे अपने निकट इल्म -ए- ग़ैब में रखने को प्राथमिकता दी है, कि तू क़ुरआन को मेरे दिल की बहार, मेरे सीने का नूर, मेरी चिंता को दूर करने वाला और मेरी परेशानी व शंका को ले जाने वाला बना, तो अल्लाह तआला उसकी चिंता व दुःख को दूर कर देता है, तथा उसे प्रसन्नता से बदल देता है)।

पूछा गयाः हे अल्लाह के रसूल, क्यों न इसे हम सीख लें?

आपने फ़रमायाः जो इसको सुने उसे चाहिए कि वह इसे सीख ले"।[1]

और चुपके-चुपके दुआ करने के दस लाभ का उल्लेख इब्ने तैमीय्या ने किया है, जैसाकि "मजमू अल-फ़तावा" (१५/ १५-२२) में है।

3- **दिल लगा करके दुआ करना**, अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु की इस हदीस़ के कारणः (ادعو الله وأنتم موقنون بالإجابة، واعلموا أن الله لا يستجيب دعاء من قلب غافل لاهٍ) "तुम अल्लाह से इस उम्मीद के साथ दुआ करो कि तुम्हारी दुआ अवश्य स्वीकार की जाएगी, और यह बात भली भांति जान लो कि अल्लाह तआला खिलवाड़ करते हुए बिना दिल से किए गए दुआ को क़बूल नहीं करता है"।[2]

[1] इस हदीस़ को अहमद ने "मुसनद" (१/ ३९१) में रिवायत किया है, तथा अलबानी ने "सहीहह" (१९९) में सहीह क़रार दिया है।

[2] पूर्व में इस हदीस़ की तख़रीज (विवरण) का उल्लेख किया जा चुका है।

(अर्थात, जब तुम दुआ करो तो दिल लगा कर दुआ करो, सोच समझ कर दुआ करो, और ध्यान रहे कि तुम तेज, प्रताप तथा प्रभुत्व वाले रब को संबोधित कर रहे हो, अतः किसी भी रूप में एक दुर्बल व कमज़ोर भक्त के लिए उचित नहीं है कि वह अपने स्वामी को ऐसे वाक्यों द्वारा संबोधित करे जिसे वह समझता ही नहीं है, अथवा बारंबार ऐसे वाक्यों का प्रयोग करे जिनके अर्थों को वह जानता नहीं है या उन वाक्यों की मूल भावना से बिल्कुल अनभिज्ञ है)।[1]

शैख़ अब्दुर्रहमान बिन सादी[2] रहिमहुल्लाह सूरह आराफ़ में अवतरित अल्लाह तआला के फ़रमानः ﴿ٱدْعُوا۟ رَبَّكُمْ تَضَرُّعًا وَخُفْيَةً ۚ إِنَّهُۥ لَا يُحِبُّ ٱلْمُعْتَدِينَ ﴿٥٥﴾ وَلَا تُفْسِدُوا۟ فِى ٱلْأَرْضِ بَعْدَ إِصْلَٰحِهَا وَٱدْعُوهُ خَوْفًا وَطَمَعًا ﴿٥٦﴾﴾ (तुम अपने रब से दुआ करो गिड़गिड़ा कर भी और चुपके-चुपके भी, निस्संदेह अल्लाह तआला उन लोगों को नापसंद करता है जो हद से निकल जाएं।। और सुधार हो जाने के पश्चात संसार में फ़साद व उपद्रव न फैलाओ, और तुम अल्लाह की इबादत व उपासना करो उस से भयभीत होते हुए तथा आशान्वित रहते हुए)[3], की व्याख्या करते हुए कहते हैं किः

"दुआ में, दुआ -ए- मसअला (मांगने वाली प्रार्थना) एवं दुआ -ए- इबादत (उपासना वाली प्रार्थना) दोनों सम्मिलित हैं, अल्लाह तआला ने गिड़गिड़ा कर दुआ करने का आदेश दिया है, अर्थात सम्पूर्ण विनम्रता अपनाते हुए तथा निरंतर उपासना करते हुए दुआ करना, और (وَخُفْيَةً (ख़ुफ्यतन, छिप्त रूप से)) का अर्थ है कि सार्वजनिक तौर पर इस प्रकार से ज़ोर-ज़ोर से दुआ न मांगो जिससे पाखण्ड का आभास हो, बल्कि छिप्त रूप से चुपके-चुपके अल्लाह तआला से पूरे इख़लास व निश्छलता के साथ दुआ करो।

---

[1] देखे: अब्दुल्लाह अलख़ुज़री द्वारा रचित "किताबुद्दुआ" (पृष्ठः २३), प्रकाशकः मदार अल-वतन, रियाज़।

[2] आपः शैख़ अल्लामा मुफ़स्सिर अब्दुर्रहमान बिन नासिर सादी हैं, आप नज्द के प्रकांड विद्वानों में से हैं, क़सीम के एक नगर उनैज़ा को आपने अपना निवास स्थान बनाया, सन १३०७ हिजरी में आपका जन्म तथा १३७६ हिजरी में देहांत हुआ, आप से असंख्य लोगों ने शिक्षा ली जिनमें से कुछ आगे चल कर इस्लाम के बड़े विद्वानों में गिने गए, जैसे शैख़ अब्दुल्लाह बिन अब्दुल अज़ीज़ बिन अक़ील, शैख़ अब्दुल्लाह बिन अब्दुर्रहमान अल-बस्साम तथा शैख़ मुहम्मद बिन स़ालेह बिन-उसैमीन आदि, उनमें से मृत्यु को प्राप्त हो चुके उलेमा पर अल्लाह अपनी असीम कृपा करे तथा जीवित की रक्षा करे।
उनकी जीवनी पढ़ने के लिए शैख़ अब्दुल्लाह बिन अब्दुर्रहमान अल-बस्साम द्वारा रचित पुस्तक "उलेमा -ए- नज्द ख़िलाल स़मानियता क़ूरून" देखें।

[3] सूरह आराफ़ः ५५-५६ ।

﴿ إِنَّهُۥ لَا يُحِبُّ ٱلْمُعْتَدِينَ ﴾ (निस्संदेह अल्लाह तआला उन लोगों को नापसंद करता है जो हद से निकल जाएं), अर्थात किसी भी मामले में हद को फलांग जाने वाला, और इसी हद के फलांगने में से यह भी है कि बंदा अल्लाह तआला से ऐसी वस्तुओं का प्रश्न करे जो उसके लिए अनुचित है, अथवा दुआ में "तनत्तुअ"[1] अर्थात अतिश्योक्ति से काम ले, या दुआ करते समय अपनी आवाज़ को बुलंद करने में अत्युक्ति करे, ये सभी उस हद फलांगने में दाख़िल हैं जिसको वर्जित किया गया है।

﴿ وَلَا تُفْسِدُوا۟ فِى ٱلْأَرْضِ ﴾ (धरती पर फ़साद न फैलाओ), कुकर्म करने के द्वारा।

﴿بَعْدَ إِصْلَٰحِهَا﴾ (उसमें सुधार हो जाने के पश्चात), सदकर्मों के द्वारा, क्योंकि कुकर्म व गुनाह नैतिकता, कर्तव्य तथा जीविका सभी को फ़ासिद व बर्बाद कर देता है, जैसाकि अल्लाह तआला फ़रमान हैः ﴿ظَهَرَ ٱلْفَسَادُ فِى ٱلْبَرِّ وَٱلْبَحْرِ بِمَا كَسَبَتْ أَيْدِى ٱلنَّاسِ ﴾ (लोगों की करतूतों के कारण जल एवं थल में उपद्रव फैल गया)[2], जब्कि इसके विपरीत सदकर्मों के द्वारा नैतिकता, कर्तव्य, जीविका तथा लोक एवं परलोक की स्थितियों में सुधार आता है।

अर्थात उसके दंड से भयभीत हो कर तथा उसके सवाब व पुण्य की आशा रखते हुए, उन इबादतों के स्वीकार्य होने की उम्मीद रखते हुए तथा उनके रद्द हो जाने से डरते हुए, और उस बंदे की तरह दुआ न करो जो आत्ममुग्धता का शिकार होकर अपने निश्चित स्थान से अपने

---

[1] अरबी भाषा का शब्द "तनत्तुअ" का अर्थ है तकल्लुफ़, बनावट तथा अतिश्योक्ति करना, जैसे जन्नत की वस्तुओं का विस्तार से वर्णन करते हुए जन्नत माँगना, बात को इस प्रकार से लम्बा करना जिसका कोई लाभ न हो, तुकबंदी करना, विस्तृत रूप से जन्नत के गुणों का वर्णन, बात को घुमा फिरा कर बयान करना, ऐसा न करना वाजिब है, और जामेअ (संक्षिप्त) दुआओं को लाज़िम पकड़ना चाहिए, और शीघ्र ही अब्दुल्लाह बिन मुग़फ़्फ़ल रज़ियल्लाहु अन्हु की हदीस़ आएगी जिसमें है कि उन्होंने जब अपने पुत्र को इस प्रकार से दुआ करते हुए सुनाः (ऐ अल्लाह मैं जब जन्नत में प्रवेश करूँ तो तुझसे जन्नत के दाईं ओर सफ़ेद महल का सवाल करता हूँ), तो इसका इंकार व खंडन किया।
शैख़ मुहम्मद बिन अहमद अल-फ़ीफ़ी हफिज़हुल्लाह की इस विषय में "अल-एतेदाअ फ़िद्दुआ" के नाम से बड़ी उत्तम व महत्वपूर्ण पुस्तक है, जो अधिक जानकारी चाहता है उसे इस पुस्तक का अवश्य अध्यन करना चाहिए।

[2] सूरह रूमः ४१।

आपको बड़ा समझते हुए ऐसे दुआ करता हो जैसे अपने रब पर एहसान[1] कर रहा हो, अथवा उस व्यक्ति की तरह दुआ न करो जो बेदिली व उपेक्षित भाव से दुआ करता हो।

अल्लाह तआला ने दुआ करने के जिन आदाब व शिष्टाचार का उल्लेख किया है उसका सारंश यह है कि, केवल एक अल्लाह के लिए इख़्लास़ व निःकपट भाव से दुआ किया जाए, क्योंकि यह चुपके-चुपके, छिप्त एवं गुप्त रूप से दुआ करने को सम्मिलित है, और हृदय भयभीत तथा आशावान दोनों हो, न तो निर्लिप्त भाव से और स्वयं को सुरक्षित समझते हुए और न ही दुआ के स्वीकार अस्वीकार होने की परवाह न करते हुए, दुआ में यही एहसान है, क्योंकि किसी भी इबादत व उपासना में एहसान का अर्थ है उस में भरसक प्रयास करना तथा उसे पूर्णरूपेण मुकम्मल तौर पर अंजाम देना कि उसमें किसी प्रकार की कोई त्रुटि न रह जाए"। उनका कथन समाप्त हुआ।

4- **आकाश की ओर हाथों को उठा कर अपनी असहायता को दर्शाते हुए दुआ करना** भी दुआ के आदाब में से है, क्योंकि इसमें सर्वशक्तीमान व प्रभुत्वशाली अल्लाह के समक्ष स्वयं को विनम्र एवं असहाय प्रदर्शित करना है, चुनाँचे सलमान फ़ारसी रज़ियल्लाहु अन्हु से वर्णित है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः "निःसंदेह तुम्हारा रब बड़ा लज्जा वाला तथा दाता है जब कोई बंदा अपने हाथों को उठा कर उससे दुआ करता है तो उसे लज्जा आती है कि वह उसे ख़ाली हाथ लौटा दे"।[2]

5- **दुआ यदि क्षमा याचना से संबंधित हो तो अपने गुनाहों का एतराफ़ करना** भी दुआ के आदाब में से है, और जो नबियों के दुआ माँगने के ढंग पर विचार करेगा तो उसे यह चीज़ स्पष्ट रूप से दिखाई देगी, चुनाँचे आदम अलैहिस्सलाम ने कहाः ﴿قَالَا رَبَّنَا ظَلَمۡنَآ أَنفُسَنَا وَإِن لَّمۡ تَغۡفِرۡ لَنَا وَتَرۡحَمۡنَا لَنَكُونَنَّ مِنَ ٱلۡخَٰسِرِينَ﴾ (हे हमारे रब (प्रभु)

---

[1] ऐसी प्रवृत्ति कर्म के अकारत हो जाने का कारण बनती है, क़ुरआन में हैः ﴿وَلَا تَمۡنُن تَسۡتَكۡثِرُ﴾ (तुम इस लिए उपकार न करो कि इसके द्वारा अधिक लो), सूरह मुदस्सिरः ६, एवं दूसरे स्थान पर अल्लाह तआला का फ़रमान हैः ﴿قُل لَّا تَمُنُّواْ عَلَيَّ إِسۡلَٰمَكُمۖ بَلِ ٱللَّهُ يَمُنُّ عَلَيۡكُمۡ أَنۡ هَدَىٰكُمۡ لِلۡإِيمَٰنِ﴾ (आप कह दीजिए कि मुझ पर अपने इस्लाम का उपकार न जताओ, बल्कि अपने ऊपर अल्लाह का उपकार मानो जिसने तुम्हें ईमान की राह दिखाई) सूरह हुजुरातः १७।

[2] इस ह़दीस़ को इब्ने माजह (३८६५) तथा इब्ने ह़िब्बान (३/ १६०) ने रिवायत किया है, तथा अलबानी ने इसे सहीह कहा है।

हमने अपने ऊपर अत्याचार कर लिया है और यदि तू हमें क्षमा तथा हमारे ऊपर दया नहीं करेगा तो हम अवश्य ही नाश हो जाएंगे)।[1]

और अल्लाह तआला ने यूनुस अलैहिस्सलाम के बारे में कहाः ﴿وَذَا ٱلنُّونِ إِذ ذَّهَبَ مُغَٰضِبًا فَظَنَّ أَن لَّن نَّقۡدِرَ عَلَيۡهِ فَنَادَىٰ فِي ٱلظُّلُمَٰتِ أَن لَّآ إِلَٰهَ إِلَّآ أَنتَ سُبۡحَٰنَكَ إِنِّي كُنتُ مِنَ ٱلظَّٰلِمِينَ﴾ (तथा ज़ुन्नून (मछली वाले अर्थात यूनुस अलैहिस्सलाम) को याद करो, जब्कि वह क्रोधित हो कर चला गया, और सोचा कि हम उसे पकड़ेंगे नहीं, अंततः उसने अंधेरे में पुकारा कि तेरे सिवाय कोई सच्चा पूज्य नहीं, तू पाक व पवित्र है, वास्तव में मैं ही दोषी हूँ)।[2]

और अबू बकर सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से कहा कि आप मुझे ऐसी दुआ सिखलाएं जिसके द्वारा मैं नमाज़ में दुआ करूँ, तो आपने फ़रमायाः यह दुआ पढ़ोः (اللهم إني ظلمت نفسي ظلما كثيرا، ولا يغفر الذنوب إلا أنت، فاغفرلي مغفرة من عندك وارحمني، إنك أنت الغفور الرحيم) (अल्लाहुम्मा इन्नी ज़लमतु नफ़्सी ज़ुल्मन कसीरा, व ला यग़फिरुज़्ज़ुनूब इल्ला अन्ता, फ़ग़फिरली मग़फिरतम मिन इन्दिक, इन्नका अन्तल ग़फूरुर्रहीम) (अर्थातः ऐ अल्लाह, मैंने अपने ऊपर अत्यधिक ज़ुल्म कर लिया है, और तेरे सिवाय कोई ज़ुल्म को माफ़ करने वाला नहीं है, अतः तू अपने पास से मुझे माफ़ कर दे तथा मेरे ऊपर दया कर, निःसंदेह तू बड़ा दयावान तथा क्षमा करने वाला है।[3]

तथा शद्दाद बिन औस रज़ियल्लाहु अन्हु से वर्णित है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः “सैय्यिदुल इस्तिग़फ़ार यह कहना हैः (اللهم أنت ربي لا إله إلا أنت، خلقتني وأنا عبدك، وأنا على عهدك ووعدك ما استعطت، أعوذ بك من شر ما صنعت، أبوء لك بنعمتك علي، وأبوء بذنبي فاغفر لي، فإنه لا يغفر الذنوب إلا أنت) (हे अल्लाह तू मेरा रब व पालनहार है तेरे सिवाय कोई सच्चा माबूद व पूज्य नहीं, तूने मुझे पैदा किया है और मैं तेरा बंदा हूँ, मैं तुझसे किए गए वादा व संकल्प पर क्षमता भर क़ायम हूँ, मैं तेरी शरण चाहता हूँ अपने हर उसे कर्म से जिसके

[1] सूरह आराफ़ः २३।

[2] सूरह अम्बियाः ८७।

[3] इसे बुख़ारी (८३४) तथा मुस्लिम (२७०५) ने रिवायत किया है।

कारण मैं तेरी नेमतों (अनुग्रहों) से वंचित हो जाऊँ, मैं अपने गुनाहों का एतराफ़ करता हूँ अतः तू मुझे माफ़ कर दे, क्योंकि तेरे सिवा कोई और गुनाहों को माफ़ करने वाला नहीं है)"।[1]

6- **अपनी दयनीय स्थिति का उल्लेख करना** भी दुआ के आदाब में से है, और इसका उदाहरण सूरह मरियम के प्रारंभ में वर्णित ज़करीय्या अलैहिस्सलाम की दुआ है: ﴿قَالَ رَبِّ إِنِّي وَهَنَ ٱلۡعَظۡمُ مِنِّي وَٱشۡتَعَلَ ٱلرَّأۡسُ شَيۡبٗا وَلَمۡ أَكُنۢ بِدُعَآئِكَ رَبِّ شَقِيّٗا﴾ (उसने कहा: हे मेरे रब (प्रभु) मेरी अस्थियां निर्बल हो गईं और सिर बुढ़ापे के कारण सफेद हो गया, तथा हे मेरे पालनहार कभी ऐसा नहीं हुआ कि मैं तुझसे दुआ करके निष्फल हुआ हूँ)[2]। ज़करीय्या अलैहिस्सलाम ने प्रार्थना करने के पूर्व अपने बुढ़ापे तथा दुर्बलता को बताते हुए एक भूमिका बांधी जो दया तथा कृपा भाव को प्रेरित करती व जगाती है, फिर पूर्व में अल्लाह के द्वारा स्वीकार किए गए अपनी दुआओं का वसीला पकड़ा और कहा: ﴿وَلَمۡ أَكُنۢ بِدُعَآئِكَ رَبِّ شَقِيّٗا﴾ (मैं तुझसे माँग कर कभी निराश नहीं हुआ)।

एवं मूसा अलैहिस्सलाम ने जब दोनों महिलाओं के जानवरों को पानी पिला दिया तो कहने लगे: ﴿رَبِّ إِنِّي لِمَآ أَنزَلۡتَ إِلَيَّ مِنۡ خَيۡرٖ فَقِيرٞ﴾ (हे मेरे रब, तू जो भी भलाई मुझ पर उतार दे मैं उसका मोहताज हूँ)[3], अंततोगत्वा उनके लिए ख़ैर व भलाई आई जब दोनों में से एक महिला उनके पास अपने पिता के पास जाने का आमंत्रण लेकर पहुँची, और वहीं उन्होंने नेक पत्नी, पवित्र ससुराल तथा निर्धनता को दूर कर देने वाला रोज़गार पाया ﴿فَجَآءَتۡهُ إِحۡدَىٰهُمَا تَمۡشِي عَلَى ٱسۡتِحۡيَآءٖ قَالَتۡ إِنَّ أَبِي يَدۡعُوكَ لِيَجۡزِيَكَ أَجۡرَ مَا سَقَيۡتَ لَنَاۚ﴾ (तो दोनों में से एक स्त्री लज्जा के साथ चलती हुई उसके पास आई, और उसने कहा: मेरे पिता आप को बुला रहे हैं ताकि आपने जो हमारे लिए पानी पिलाया है उसका पारिश्रमिक दें)।[4]

7- **दुआ करने के पूर्व अल्लाह तआला की प्रशंसा करना तथा नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दरूद भेजना** भी दुआ के आदाब में से है, और इसका प्रमाण बुरैदा असलमी रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत है कि वह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु

---

[1] इसे बुख़ारी (६३०६) ने रिवायत किया है।

[2] सूरह मरयम: ४।

[3] सूरह क़सस: २४।

[4] सूरह क़सस: २५।

अलैहि व सल्लम के संग मस्जिद में दाख़िल हुए तो देखा कि एक आदमी नमाज़ पढ़ कर दुआ माँग रहा है और कह रहा हैः हे अल्लाह, मैं तुझ से प्रश्न करता हूँ और मैं गवाही देता हूँ कि तू ही अल्लाह है तेरे सिवाय कोई और माबूद नहीं, तू अकेला व बेनियाज़ (निःस्पृह) है, जो न तो किसी की संतान है और न उसकी कोई संतान है, और न जिसके समान कोई है।

तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः "जिसके हाथ में मेरी जान है उस ज़ात की क़सम, इसने अल्लाह के इस्म -ए- आज़म (महान नाम) के द्वारा प्रश्न किया है जिसके द्वारा यदि प्रश्न किया जाए तो दिया जाता है, और जब पुकारा जाए तो पुकार सुनी जाती है"।[1]

और अनस बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत है कि वह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ बैठे हुए थे और एक व्यक्ति नमाज़ पढ़ रहा था, फिर उसने दुआ किया तो कहाः (اللهم إني أسألك بأن لك الحمد، لا إله إلا أنت المنان، بديع السماوات والأرض، يا ذا الجلال والإكرام، يا حي يا قيوم) (हे अल्लाह मैं तुझसे माँगता हूँ, तथा तेरे लिए ही समस्त प्रकार की प्रशंसा है, तेरे सिवाय कोई अन्य पूज्य नहीं तू बड़ा एहसान करने वाला है, धरती व आकाश का अविष्कार करने वाला, हे तेज तथा सम्मान वाले, हे सदा जीवित रहने वाले हे नित्य स्थाई।

तो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः इसने अल्लाह के इस्म -ए- आज़म के द्वारा प्रार्थना की है जिसके द्वारा यदि प्रार्थना की जाए तो वह स्वीकार की जाती है, और यदि उसके द्वारा माँगा जाए तो दिया जाता है।[2]

और उन्हीं से वर्णित है किः नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जब कोई परेशानी वाला मामला पेश आता तो आप कहतेः (يا حي يا قيوم، برحمتك أستغيث) (हे सदा जीवित रहने वाले हे नित्य स्थाई, मैं तेरी रहमत व दया भाव का वास्ता दे कर तुझसे फरियाद करता हूँ)।[3]

---

[1] इस हदीस़ को तिर्मिज़ी (३४७५), इब्ने हिब्बान (३/ १७४), इब्ने माजह (३८५७) तथा अहमद ने "मुसनद" (५/ ३४९, ३६०) में रिवायत किया है, और अलबानी ने इसे सहीह क़रार दिया है।

[2] इस हदीस़ को अबू दाऊद (१४९५), तिर्मिज़ी (३५४४), नसई (१३००), इब्ने माजह (३८५८) तथा अहमद (३/ १५८) आदि ने रिवायत किया है, और उक्त शब्द अबू दाऊद के हैं, और अलबानी रहिमहुल्लाह ने इसे सहीह क़रार दिया है।

[3] इस हदीस़ को तिर्मिज़ी (३५२४) ने रिवायत किया है तथा अलबानी ने इसे हसन क़रार दिया है।

तथा अबू उमामा रज़ियल्लाहु अन्हु नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रिवायत करते हुए कहते हैं कि आपने फ़रमायाः “अल्लाह तआला का इस्म -ए- आज़म (महान नाम) क़ुरआन करीम की तीन सूरतों में हैः अल-बक़रह, आले इमरान तथा ताहा”।

क़ासिम[1] कहते हैं : जब मैंने उसे तलाश किया तो पता चला कि वहः ﴿ٱلۡحَيُّ ٱلۡقَيُّومُ﴾ (सदा जीवित रहने वाला तथा नित्य स्थायी)[2] है।

इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हुमा कहते हैं कि दुःख व चिंता के समय रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम यह दुआ पढ़ते थेः (لا إله إلا الله العظيم الحليم، لا إله إلا الله رب العرش العظيم، لا إله إلا الله رب السماوات ورب الأرض ورب العرش الكريم) (अज़ीम व ह़लीम (महान व सहनशील) अल्लाह के सिवाय कोई सच्चा पूज्य नहीं, महान सिहांसन वाले अल्लाह के सिवाय कोई सच्चा पूज्य नहीं, आकाश व धरती तथा अर्श -ए- करीम (बुज़ुर्ग व उदार सिंहासन) के रब के सिवाय कोई सच्चा रब नहीं)।[3]

तथा अली बिन अबू तालिब रज़ियल्लाहु अन्हु से वर्णित है, वह कहते हैं किः रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुझे सिखाया है कि जब मेरे ऊपर कोई आपदा आए तो यह पढ़ूँ: (لا إله إلا الله الحليم الكريم، سبحان الله وتبارك الله رب العرش العظيم، والحمد لله رب العالمين) (अल्लाह सहनशील व उदार के सिवाय कोई सच्चा पूज्य नहीं, अल्लाह पाक व पवित्र है, अल्लाह तआला अति शुभ व महान सिंहासन वाला है, तथा समस्त प्रकार की प्रशंसा सारे संसार के रब के लिए है)।[4]

साद बिन अबि वक़्क़ास़ रज़ियल्लाहु अन्हु से वर्णित है वह कहते हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः “ज़िन्नून (यूनुस अलैहिस्सलाम) की दुआ जो उन्होंने मछली के पेट में की थी वह यह हैः (لا إله إلا أنت سبحانك إني كنت من الظالمين) (तेरे सिवाय कोई सच्चा

---

[1] यह अबू उमामा रज़ियल्लाहु अन्हु से इस अस़र को रिवायत करने वाले रावी (वाचक) हैं।

[2] इस ह़दीस़ को ह़ाकिम ने “मुस्तदरक” (१/ ५०५) में रिवायत किया है, तथा अलबानी ने इसे “सह़ीह़ह” (७४६) में सह़ीह क़रार दिया है, और “सह़ीह़ अल-जामे” (९८०) का भी अवलोकन करें।

[3] इस ह़दीस़ को बुख़ारी (६३४६) तथा मुस्लिम (२७३०) ने रिवायत किया है।

[4] इस ह़दीस़ को अह़मद ने “मुसनद” (१/ ९१) में रिवायत किया है, तथा मुसनद की तह़क़ीक़ (शोध) करने वालों ने इसे सह़ीह़ क़रार दिया है।

पूज्य नहीं, तू पाक व पवित्र है, वास्तव में मैं ही दोषी हूँ), इसके द्वारा यदि कोई मुस्लिम किसी चीज़ के लिए दुआ करता है तो अल्लाह तआला उसे अवश्य स्वीकार करता है"।[1]

ये ह़दीसें तथा इन जैसी अन्य ह़दीसें ये लाभ देती हैं कि प्रार्थी को चाहिए कि वह प्रार्थना करने के पूर्व अल्लाह तआला की प्रशंसा करे क्योंकि यह प्रभुत्वशाली अल्लाह के समक्ष मनुहार करना है जोकि दिल को मोम करने व पिघलाने का कार्य करता है जिसके परिणामस्वरूप दुआ के स्वीकार्य होने की प्रबल संभावना बन जाती है।

दुआ करने के पूर्व प्रशंसा करने का सबसे बड़ा उदाहरण सूरह फ़ातिह़ा है, क्योंकि इसके दो भाग हैं, प्रथम प्रशंसा है तथा द्वितीय प्रार्थना है, जहाँ तक प्रशंसा का प्रश्न है तो वह अल्लाह तआला का यह फ़रमान है: ﴿ٱلْحَمْدُ لِلَّهِ رَبِّ ٱلْعَٰلَمِينَ ۝٢ ٱلرَّحْمَٰنِ ٱلرَّحِيمِ ۝٣ مَٰلِكِ يَوْمِ ٱلدِّينِ ۝٤﴾ (समस्त प्रकार की प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो सारे संसार का रब व पालनहार है। जो अत्यंत कृपाशील एवं दयावान है। जो प्रतिकार (बदले) के दिन का मालिक है।)

तथा द्वितीय भाग शेष सूरत है जोकि प्रार्थना एवं आशा है: ﴿ٱهْدِنَا ٱلصِّرَٰطَ ٱلْمُسْتَقِيمَ ۝٦ صِرَٰطَ ٱلَّذِينَ أَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ غَيْرِ ٱلْمَغْضُوبِ عَلَيْهِمْ وَلَا ٱلضَّآلِّينَ ۝٧﴾ ((हे अल्लाह,) हमें सीधा मार्ग (सुपथ) दिखा। उनका मार्ग जिन पर तूने पुरस्कार किया, उनका नहीं जिन पर तेरा प्रकोप उतरा और न ही उनका जो गुमराह (कुपथ, पथभ्रष्ट) हो गए।)

मेरा कहना है कि: अल्लाह की रुबूबियत का उल्लेख करते हुए उसकी प्रशंसा करना, अल्लाह की प्रशंसा करने का सर्वोत्तम ढ़ंग है, जैसे दुआ करने वाला इस प्रकार कहे: हे मेरे रब (पालनहार), मैं तुझसे अमूक अमूक चीज़ें मांगता हूँ, और इसी कारणवश बहुतेरे क़ुरआनी दुआएं अल्लाह तआला की रुबूबियत का उल्लेख करने से प्रारंभ होती हैं, इस का उदाहरण अल्लाह तआला का यह फ़रमान है: ﴿رَبَّنَآ ءَاتِنَا فِى ٱلدُّنْيَا حَسَنَةً وَفِى ٱلْءَاخِرَةِ حَسَنَةً وَقِنَا عَذَابَ ٱلنَّارِ﴾ (हे हमारे रब (प्रभु) हमें लोक में भलाई दे एवं परलोक में भी भलाई दे, और हमें नरक की यातना से सुरक्षित रख)[2], एवं यह फ़रमान: ﴿رَبَّنَا لَا تُؤَاخِذْنَآ إِن نَّسِينَآ

[1] इस ह़दीस़ को तिर्मिज़ी (३५०५) तथा नसई ने "कुब्रा" (१०४१७) में रिवायत किया है, और अलबानी ने इसे सह़ीह़ क़रार दिया है।

[2] सूरह बक़रह: २०१।

﴿أَوۡ أَخۡطَأۡنَاۚ﴾ (हे मेरे रब (पालनहार) यदि हमसे कोई भूल-चूक हो जाए तो हमें न पकड़)[1], एवं यह फ़रमानः ﴿رَبَّنَا لَا تُزِغۡ قُلُوبَنَا بَعۡدَ إِذۡ هَدَيۡتَنَا﴾ (हे हमारे रब, हमारे दिलों को मार्गदर्शित कर देने के पश्चात कुटिल न कर)[2] इत्यादि, इस प्रकार के अनेक उदाहरण हैं।

तथा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक आदमी को नमाज़ पढ़ते हुए सुना कि उसने सर्वप्रथम अल्लाह की प्रशंसा व बड़ाई बयान की तत्पश्चात नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दरूद भेजा, तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः प्रार्थना कर तेरी प्रार्थना स्वीकार की जाएगी, तथा माँग तुझे दिया जाएगा।[3]

तथा एक रिवायत में इस प्रकार है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक व्यक्ति से कहाः इसने जल्दबाज़ी से काम लिया, फिर उसको बुलाया तथा उससे या किसी और से कहाः “जब तुम में से कोई नमाज़ पढ़े तो सर्वप्रथम अल्लाह की प्रशंसा व उसकी बड़ाई बयान करने से आरंभ करे, तत्पश्चात नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दरूद भेजे, फिर जो चाहे दुआ करे”।[4]

उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अन्हु से वर्णित है वह कहते हैं किः “दुआ आकाश एवं धरती के मध्य ठहरी रहती है, उसमें से कुछ भी उस समय तक ऊपर नहीं चढ़ सकता जब तक नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दरूद न भेजा जाए”।[5]

और अली बिन अबू तालिब रज़ियल्लाहु अन्हु से मौक़ूफ़ रिवायत है किः “प्रत्येक दुआ उस समय तक रोकी हुई होती है जब तक मुहम्मद तथा मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के परिवार वालों पर दरूद न भेजा जाए”।[6]

---

[1] सूरह बक़रहः २८६ ।

[2] सूरह आल -ए- इमरानः ८ ।

[3] इसे अबू दाऊद (१३३१), तिर्मिज़ी (३४७६), नसई (१२८३) ने रिवायत किया है, तथा तिर्मिज़ी ने कहा है किः “यह ह़दीस़ ह़सन है”, एवं अलबानी ने इसे सह़ीह़ क़रार दिया है।

[4] इस ह़दीस़ को तिर्मिज़ी (३४७७), इब्ने ख़ुज़ैमा (१/ ३५१) तथा बैहिक़ी (२/ १४८) ने रिवायत किया है, तथा तिर्मिज़ी ने कहा है किः “यह ह़दीस़ ह़सन सह़ीह़ है”, एवं अलबानी ने इसे सह़ीह़ क़रार दिया है।

[5] इस ह़दीस़ को तिर्मिज़ी (४८६) ने रिवायत किया है, अलबानी ने इसे सह़ीह़ क़रार दिया है।

[6] इस ह़दीस़ को त़बरानी ने “औसत़” (७२५) में रिवायत किया है, अलबानी ने इसे सह़ीह़ क़रार दिया है, जैसा कि “अल-सिलसिला अल-स़हीहह” (२०३५) में है। मैं यह कहता हूँ किः इस प्रकार का “अस़र” मरफ़ूअ के स्थानापन्न है क्योंकि इस तरह की बात सहाबी द्वारा अपने इज्तेहाद (कपोल कल्पना) से नहीं कही जा सकती है।

8- **दुआ के स्वीकार होने में जल्दबाज़ी न करना** भी दुआ के मक़बूल होने के कारणों में से है, अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु की उस हदीस़ के कारण जिसमें है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः "तुम में से किसी की दुआ उस समय तक क़बूल होती रहती है जब तक वह उतावलापन न करे, वह कहता हैः मैंने दुआ तो की परंतु मेरी दुआ क़बूल नहीं हुई"।[1]

तथा सहीह मुस्लिम में उन्हीं की रिवायत हैः "बंदे की दुआ जो गुनाह अथवा संबंध तोड़ने वाली न हो तो वह उस समय तक स्वीकार्य होती रहती है जब तक वह उतावलापन न करे, प्रश्न किया गयाः हे अल्लाह के रसूलः उतावलापन का क्या अर्थ है?

आपने फ़रमायाः बंदा कहता हैः "मैंने कितनी ही बार दुआ किया किंतु ऐसा लगता है कि मेरी दुआ क़बूल नहीं होती, अतः वह निराश हो कर दुआ करना छोड़ देता है"।[2]

और नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः "जब कोई मुस्लिम ऐसी दुआ करता है जो गुनाह अथवा संबंध तोड़ने से संबंधित न हो तो अल्लाह तआला उस दुआ के साथ तीन प्रकार का मामला फ़रमाता हैः या तो अति शीघ्र उस दुआ को स्वीकार कर लेता है, अथवा उसको आख़िरत (परलोक) के लिए संजो कर रख लेता है, या फिर उसी के समान उस पर आने वाली विपदा को दूर कर देता है"।

तो सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम ने कहाः तब तो हम अधिकाधिक दुआ करेंगे, तो आपने फ़रमायाः अल्लाह भी तुझे ख़ूब देगा"।[3]

और यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि कभी-कभी दुआ के स्वीकार्य होने में देरी का कारण कोई हिकमत (तत्वदर्शिता) होती है जिसको केवल अल्लाह ही जानता है, और चूँकि मानव स्वाभाव धन एवं धनाढ्यता को पसंद करता है तो यदि अल्लाह तआला मानव के धन की बहुलता वाली सभी दुआओं को स्वीकार कर के उसे मालदार बना दे तो यह उसके बाग़ी एवं उपद्रवी होने का संभावित कारण बन सकता है, और देखें कि कितनी सच्ची बात कही है

---

[1] इस हदीस़ को बुख़ारी (६३४०) व मुस्लिम (२७३५) ने रिवायत किया है।

[2] इस हदीस़ को मुस्लिम (२७३५) ने रिवायत किया है।

[3] इस हदीस़ को अहमद (३/ १८) एवं बुख़ारी ने "अल-अदब अल-मुफ़रद" में अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है, और अलबानी ने इसको सहीह क़रार दिया है, जैसाकि "किताब अल-अदब अल-मुफ़रद" में मौजूद है, प्रकाशकः मकतबा अलमआरिफ़, रियाज़, और "मुसनद अहमद" (१७/ २१४) के मुहक़्क़िक़ (शोधकर्ता) ने कहा है किः "इसकी सनद जय्यिद (उत्तम) है"।

अल्लाह तआला ने: ﴿وَلَوْ بَسَطَ ٱللَّهُ ٱلرِّزْقَ لِعِبَادِهِۦ لَبَغَوْا۟ فِى ٱلْأَرْضِ وَلَٰكِن يُنَزِّلُ بِقَدَرٍ مَّا يَشَآءُ ۚ إِنَّهُۥ بِعِبَادِهِۦ خَبِيرٌۢ بَصِيرٌ﴾ (और यदि अल्लाह तआला अपने भक्तों के लिए जीविका को फैला देता तो वह धरती में विद्रोह कर देते, परंतु वह एक अनुमान के अनुसार जैसे वह चाहता है उतारता है, वास्तव में वह अपने भक्तों से भली-भांति परिचित है (तथा) वह उन्हें देख रहा है)।[1]

9- दुआ के आदाब में से यह भी है, **विस्तार को छोड़ कर जवामेअ अल-कलिम (ऐसे वाक्यों का प्रयोग जिनके अक्षर कम हों तथा अर्थ अधिक हों) के द्वारा अर्थात संक्षेप में दुआ करना:** आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा से वर्णित है वह कहती हैं कि: "रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दुआ में संक्षिप्तीकरण (जवामेअ) को प्रिय रखते थे तथा उसके अतिरिक्त (विस्तार) को छोड़ देते थे"।[2]

तथा इसी का एक उदाहरण मुस्लिम की वह रिवायत भी है जिसको फ़रवा बिन नौफ़ल ने रिवायत किया है, वह कहते हैं कि: मैंने आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा से प्रश्न किया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम किस चीज़ के द्वारा दुआ करते थे, तो उन्होंने कहा: "आप इस तरह कहा करते थे: (اللهم إني أعوذ بك من شر ما عملت ومن شر ما لم أعمل) हे अल्लाह मैंने जो कर्म किया उसकी बुराई से तेरी शरण चाहता हूँ, तथा जो कर्म मैंने नहीं किया उसकी भी बुराई से तेरी शरण चाहता हूँ"।[3]

इब्ने अबू मूसा से वर्णित है वह अपने पिता से रिवायत करते हैं और वह नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से रिवायत करते हुए कहते हैं कि आप इस दुआ के द्वारा प्रार्थना किया करते थे: (رب اغفر لي خطيئتي وجهلي، وإسرافي في أمري كله، وما أنت أعلم به مني، اللهم اغفر لي خطاياي وعمدي، وجهلي وهزلي، وكل ذلك عندي، اللهم اغفر لي ما قدمت وما أخرت، وما أسررت وما أعلنت، أنت المقدم وأنت المؤخر، وأنت على كل شيء قدير) (हे मेरे रब, मेरे गुनाह तथा मेरी अज्ञनता को क्षमा कर दे, तथा समस्त मामले में मेरे इसराफ़ (फिज़ूल एवं अनावश्यक कार्य) को माफ़ कर दे, और जिसको तू मुझसे अधिक जानता है, हे अल्लाह मेरे द्वारा जानबूझ कर किए गए तथा मेरी भूल-चूक को माफ़ कर दे, और मेरी अज्ञानता एवं बिना उद्देश्य किए गए कर्म को,

[1] सूरह शूरा: ४७।

[2] इस ह़दीस़ को अबू दाऊद (१४८२) एवं इब्ने अबी शैबा (२९१५६) ने रिवायत किया है, तथा अलबानी इसे सह़ीह़ क़रार दिया है।

[3] इस ह़दीस़ को मुस्लिम (२७१६) ने रिवायत किया है।

और हरेक उस चीज़ को जो मेरी ओर से हो, हे अल्लाह मैंने जो पहले किया अथवा बाद में किया सभी को माफ़ कर दे, और जो मैंने दिखा कर किया अथवा छुपा कर किया, तू ही आगे करने वाला है और तू ही पीछे करने वाला है, और तू हरेक चीज़ पर क़ुदरत (सामर्थ्य) रखने वाला है।[1]

और अनस रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत है, वह कहते हैं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की अधिकतर दुआ यह होती थीः ﴿رَبَّنَآ ءَاتِنَا فِى ٱلدُّنْيَا حَسَنَةً وَفِى ٱلْـَٔاخِرَةِ حَسَنَةً وَقِنَا عَذَابَ ٱلنَّارِ﴾ (हे हमारे रब (प्रभु) हमें लोक में भलाई दे एवं परलोक में भी भलाई दे, और हमें नरक की यातना से सुरक्षित रख)।[2]

इमादुद्दीन इब्ने कसीर[3] रहिमहुल्लाह कहते हैं:

दुनियाँ में "हसनह अर्थात भलाई" मांगने में प्रत्येक वांछित सांसारिक चीज़ आ जाती है, जैसे आफ़ियत (कुशल, क्षेम), बढ़िया घर, अच्छी पत्नी, बढ़िया आजीविका, लाभदायक ज्ञान, नेक अमल (सदकर्म), आरामदायक सवारी, भूरि-भूरि प्रशंसा, इत्यादि जिसका दर्शन मुफ़स्सिरीन (व्याख्याता) के आलेखों में होता है, तथा इसके मध्य कोई विरोधाभास नहीं है क्योंकि ये समस्त दुनियाँ की हसनह (भलाई) में शामिल हैं।

जहाँ तक आख़िरत (परलोक) में हसनह (भलाई) का प्रश्न है तो इसमें सर्वोत्तम जन्नत में प्रवेश पाना है तथा उसके अंतर्गत आते हैं अरसात[4] (मैदान) में बड़ी घबराहट से अमन व रक्षा, हिसाब में आसानी इत्यादि जिसका संबंध परलोक की अच्छाई से है।

---

[1] इसे बुख़ारी (६३९८) तथा मुस्लिम (२७१९) ने रिवायत किया है, एवं उक्त शब्द बुख़ारी के हैं।

[2] इसे बुख़ारी (६३८९) तथा मुस्लिम (२६९०) ने रिवायत किया है।

[3] इमादुद्दीन, इस्माईल बिन उमर बिन कसीर, अलबुसरवी मूल, अल-दिमश्क़ी अल-शाफ़ई, आठवीं शताब्दी के प्रारंभ में आपका जन्म हुआ, इन्होंने शैख़ुल इस्लाम इब्ने तैमीय्या रहिमहुल्लाह से शिक्षा अर्जित की, तथा फ़िक़्ह, तफ़्सीर, नह्व (व्याकरण) एवं तारीख़ (इतिहास) में महारत हासिल की, उनकी बहुतेरी लाभदायक पुस्तकें हैं, सबसे प्रसिद्ध "तफ़्सीरुल क़ुरआन अल-अज़ीम" तथा इतिहास में "अल-बिदाया वल-निहाया" है, आपका देहांत सन ७७४ हिजरी में हुआ।
उनकी जीवनी पढ़ने के लिए देखें: इब्ने हजर की "अल-दुरर अल-कामिनह", इब्नुल इमाद की "शज़रात अल-ज़हब" एवं शौकानी रहिमहुमुल्लाह की "अल-बद्र अल-तालेअ"।

[4] अरबी शब्द "अरसात" बहुवचन है एकवचन "अरसह" की, जो ऐसे बड़े व खुले मैदान को कहते हैं जिसमें कोई भवन-निर्माण न हो। देखें: "अल-निहाया"।

जहाँ तक नरक से मोक्ष की बात है तो इसका अर्थ है संसार में उससे बचने के माध्यमों को सरल कर देना, जैसे गुनाह एवं ह़राम कार्यों से बचना, तथा शुबुहात (दुविधा में डालने वाली चीज़ों) एवं ह़राम से बचना। उनका कथन समाप्त हुआ।[1]

और इसमें कोई संशय नहीं कि क़ुरआन व ह़दीस़ में अवतरित दुआएं सबसे जामेअ (संक्षिप्त) हैं, तथा गलती व चूक से पाक एवं मुबारक व शुभ हैं, अतः इन के द्वारा दुआ करना इसको छोड़ कर स्वनिर्मित दुआओं के द्वारा दुआ करने की तुलना में बेहतर है कि जिसमें अनावश्यक विस्तार, बेकार की तुकबंदी एवं उलझाव वाली वाक्य रचना की गई होती है।

और इसी आश्य की ओर उस ह़दीस़ में इशारा है जिसको अबू नआमा ने रिवायत है कि अब्दुल्लाह बिन मुग़फ़्फ़ल ने अपने बेटे को इस प्रकार से दुआ करते हुए सुनाः ऐ अल्लाह मैं जब जन्नत में प्रवेश करूँ तो तुझसे जन्नत के दाईं ओर सफ़ेद मह़ल का सवाल करता हूँ।

तो उन्होंने कहाः हे मेरे सुपुत्र, अल्लाह तआला से जन्नत में प्रवेश तथा जहन्नम से सुरक्षा का सवाल करो, मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को फ़रमाते हुए सुना है किः “मेरी उम्मत में कुछ लोग होंगे जो पाकी हासिल करने तथा दुआ करने में अतिश्योक्ति से काम लेंगे”।[2]

अबू नआमा ने ही इब्ने साद से रिवायत किया है, वह कहते हैं किः मेरे पिता ने मुझे इस प्रकार से दुआ करते हुए सुनाः हे अल्लाह मैं तुझसे जन्नत तथा उसकी नेमतों एवं मनमोहकता और मनोहरता तथा अमूक-अमूक चीज़ों का प्रश्न करता हूँ, और मैं जहन्नम और उसकी ज़ंजीरों व बेड़ियों तथा अमूक-अमूक चीज़ों से तेरी शरण चाहता हूँ, तो उन्होंने कहाः हे मेरे सुपुत्र, मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को फ़रमाते हुए सुना हैः “शीघ्र ही एक ऐसा समुदाय आएगा जो दुआ करने में अतिश्योक्ति करेगा”, अतः तुम उनमें हो जाने वालों में से बचो, यदि तुम्हें जन्नत दे दिया गया तो उसमें जो भलाई है वह भी तुझे मिल जाएगी, और यदि तुझे जहन्नम से बचा लिया गया तो उसमें जो बुराई है उससे भी तुझे बचा लिया जाएगा।[3]

---

1 सूरह बक़रह आयत संख्याः २०१, की तफ़्सीर देखें।

2 इस ह़दीस़ को अबू दाऊद (९६), इब्ने माजह (३८६४) तथा इब्ने ह़िब्बान (१५/ १६६) ने रिवायत किया है, तथा अलबानी रह़िमहुल्लाह ने इसे सह़ीह़ क़रार दिया है।

3 इस ह़दीस़ को अबू दाऊद (१४८०) ने रिवायत किया है, और अलबानी ने इसे “ह़सन सह़ीह़” कहा है।

और इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हुमा कहते हैं: “जब दुआ में तुकबंदी (अनुप्रास) देखो तो उससे बचो, मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम एवं उनके सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम को ऐसा करते हुए नहीं देखा है”।[1] अर्थातः वो लोग ऐसा करने से बचते थे।

तथा शैख़ुल इस्लाम इब्ने तैमीय्या रहिमहुल्लाह फ़रमाते हैं:

इसमें कोई संदेह नहीं कि अज़कार तथा दुआएं सर्वोत्तम इबादत में से हैं, और इबादत का आधार तौक़ीफ़ (शरीअत में वर्णित तरीक़ों पर ही रुक जाना) एवं इत्तेबाअ (नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का अनुसरण) है न कि हवा (अपनी ओर से स्वनिर्मित तरीका) तथा इब्तेदाअ (नवाचार), अतः नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से वर्णित दुआ एवं अज़कार सर्वोत्तम चीज़ें हैं जिनके द्वारा एक दुआ करने वाला दुआ कर सकता है, तथा इस पथ का पथिक सुरक्षित एवं सीधे मार्ग पर है, और इसका जो लाभ एवं परिणाम निकलता है उसको ज़ुबान के द्वारा अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता, और न कोई मानव इसका अंदाज़ा लगा सकता है, और इसके अतिरिक्त जो (स्वनिर्मित) अज़कार हैं वो या तो कभी ह़राम (वर्जित) होते हैं तो कभी मकरूह (अप्रिय), और यदा-कदा वो शिर्क आधारित भी होते हैं जिनको अधिकांश लोग नहीं समझ पाते हैं, यह तो मैंने मोटे तौर पर लिखा है अन्यथा इसको यदि विस्तार से बयान करूँ तो बहुत लम्बा हो जाएगा है।

और किसी के लिए भी यह जायज़ नहीं है कि वह मस्नून अज़कार को छोड़ किसी अन्य अज़कार का लोगों के मध्य प्रचार करे, तथा उसे इस प्रकार से लोगों के बीच प्रचलित कर दे कि लोग उन पर वैसे ही अमल करने लगें जैसे वह पाँच फ़र्ज़ नमाज़ों का एहतेमाम करते हैं, बल्कि यह दीन में बिदअत ईजाद करना है जिसकी अनुमति अल्लाह तआला ने नहीं दी है, इसके विपरीत कि इंसान कभी-कभार उसे सुन्नत बनाए बिना उसके द्वारा दुआ करे, यदि इसके बारे में यह ज्ञात न हो कि इसमें ह़राम अर्थ छिप्त है तो विश्वासपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि यह ह़राम है, किंतु यदा-कदा उसमें वह अर्थ निहित होता है परंतु व्यक्ति को इसका आभास नहीं हो पाता, यह ऐसे ही है कि इंसान कभी आवश्यकतानुसार दुआ कर रहा होता है तथा उसके मस्तिष्क में दुआ के शब्द आते चले जाते हैं जिसके द्वारा वह दुआ करता है, तो यह इसी से मिलती जुलती स्थिति है।

लेकिन शरीअत में वर्णित दुआओं को छोड़ कर स्वनिर्मित दुआओं को सुन्नत का स्थान दे कर दुआ करना वर्जित है, और यह ज्ञात रहे कि शरीअत में वर्णित अज़कार तथा दुआ में सारे

[1] इस ह़दीस़ को बुख़ारी (६३३७) ने रिवायत किया है।

अर्थ निहित हैं तथा ये समस्त उद्देश्य की पूर्ति करने में सक्षम हैं, एवं उसको छोड़ कर स्वनिर्मित नई एवं बिदअत आधारित अज़्कार को वही अपनाएगा जो अज्ञानी, हद्द से बढ़ने तथा अति करने वाला होगा।[1]

10- दुआ के स्वीकार्य होने के कारणों में से है, **पूर्णविश्वास के साथ दुआ करना तथा उसको अल्लाह की इच्छा पर नहीं छोड़ना देना**, अनस रज़ियल्लाहु अन्हु की इस ह़दीस़ के कारण कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः "जब तुम में से कोई दुआ करे तो दृढ़ संकल्प के साथ अल्लाह तआला से दुआ करे, यह न कहे किः हे अल्लाह, यदि तू चाहे तो मुझे यह चीज़ दे दे, क्योंकि अल्लाह तआला को विवश करने वाला या उस पर दबाव डालने वाला कोई नहीं है"।[2]

इस अध्याय में अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु की ह़दीस़ भी है।[3]

और दुआ की स्वीकार्यता को अल्लाह की इच्छा पर छोड़ देने का अर्थ यह निकलता है कि बंदे को इसके स्वीकार अथवा अस्वीकार होने से कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता है, इसीलिए इससे रोका गया है, और वाजिब यह है कि दृढ़ संकल्प के साथ दुआ करे और इसे अल्लाह की इच्छा पर न छोड़े।

11- दुआ के स्वीकार्य होने के कारणों में से एक कारण है **तीन बार दुआ करना**, और इसकी दलील इब्ने मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु की ह़दीस़ है किः "आप जब दुआ करते तो तीन बार दुआ करते और जब आप माँगते तो तीन बार माँगते"।[4]

अल्लामा नौवी इस ह़दीस़ की व्याख्या में लिखते हैं किः "इससे तीन बार दुआ करने के मुस्तहब होने का प्रमाण मिलता है"।

12- दुआ के स्वीकार्य होने के कारणों में से एक कारण है **किसी भी परिस्थिति में निरंतर दुआ करते जाना**, चाहे दुःख हो या सुख हो, इससे बेफिक्र हो कर नहीं बैठ

---

[1] "मजमू अल-फ़तावा" (२२/ ५१०-५११)।

[2] इस ह़दीस़ को बुख़ारी (६३३८) एवं मुस्लिम (२६७८) ने रिवायत किया है।

फ़ायदाः नौवी रह़िमहुल्लाह ने इस ह़दीस़ की व्याख्या में लिखा हैः "उलेमा ने कहा है किः इसके मकरूह (अप्रिय) होने का कारण यह है कि मशीय्यत (इरादा) का प्रयोग उसी के संबंध मे किया जाएगा जिसको कोई विवश करने वाला हो, और अल्लाह तआला इससे पाक है, उसको कोई विवश व बाध्य नहीं कर सकता"।

[3] देखें: सह़ीह़ बुख़ारी (६३३९) तथा सह़ीह़ मुस्लिम (२६७९)।

[4] इस ह़दीस़ को मुस्लिम (१७९४) ने रिवायत किया है।

जाना चाहिए, क्योंकि सुख में दुआ करते रहना दुःख में की गई दुआ के मक़बूल होने का कारण है, चुनाँचे अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत है वह कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः "जिसको यह बात पसंद हो कि दुःख एवं आपदा के समय अल्लाह तआला उसकी दुआ को क़बूल करे तो उसे चाहिए कि वह सुख की स्थिति में अधिकाधिक दुआ करे"।[1]

13- दुआ के स्वीकार्य होने के कारणों में से एक कारण है, **हलाल खाना**, और इसकी दलील अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु की हदीस़ है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः हे लोगों, अल्लाह तआला पाक व पवित्र है तथा वह पवित्र को ही स्वीकार करता है, और अल्लाह तआला ने मोमिनों को उसी चीज़ का आदेश दिया है जिसका आदेश उसने रसूलों को दिया है, अतः फ़रमायाः﴿يَٰٓأَيُّهَا ٱلرُّسُلُ كُلُواْ مِنَ ٱلطَّيِّبَٰتِ وَٱعۡمَلُواْ صَٰلِحًاۖ إِنِّي بِمَا تَعۡمَلُونَ عَلِيمٞ﴾[2] (हे रसूलों, पवित्र भोजन करो एवं नेक अमल (सदकर्म) करो तुम जो भी करते हो उसे मैं जानता हूँ), तथा फ़रमायाः ﴿كُلُواْ مِن طَيِّبَٰتِ مَا رَزَقۡنَٰكُمۡ﴾[3] (हे मोमिनों, मैंने तुमको जो हलाल व पवित्र आजीविका दी है उसमें से खाओ), तत्पश्चात आपने एक व्यक्ति का उल्लेख कियाः (أشعث[4] أغبر[5]، يمد يديه إلى السماء؛ (يا رب، يا رب) ومطعمه حرام، ومشربه حرام، وملبسه حرام، وغذي بالحرم، فأنى يستجاب لذلك), जो लम्बी यात्रा करके आया है, उसके सिर तथा पाँव धूल-धूसरित हैं, वह अपने हाथों को आसमान की ओर फैलाता है और दुआ करता है (हे मेरे रब, हे मेरे रब), जब्कि उसका खाना हराम, उसका पीना हराम, उसका पहनना हराम है और हराम के द्वारा ही उसकी परवरिश हुई है, तो कैसे उसकी दुआ स्वीकार की जाएगी।[6]

प्रार्थना के स्वीकार्य होने के अस्बाब (कारण) से संबंधित इब्नुल क़ैय्यिम रह़िमहुल्लाह के लेख से चयनित फ़ायदा

[1] इस हदीस़ को तिर्मिज़ी (३३८२) ने रिवायत किया है, और अलबानी ने सहीह़ क़रार दिया है।

[2] सूरह मोमिनूनः ५१।

[3] सूरह बक़रहः १७२।

[4] अर्थात उसके सिर का बाल बिखरा हुआ हो।

[5] मटमैला, धूल-धूसरित।

[6] इस हदीस़ को मुस्लिम (१०१५) ने रिवायत किया है।

इब्नुल क़ैय्यिम रहि़महुल्लाह अपनी पुस्तक "अल-दाअ व अल-दवा" के प्राक्कथन में लिखते हैं:

यहाँ एक बात पर ध्यान देना अति आवश्यक है, वह यह कि वो अज़्कार तथा दुआएं जिनके द्वारा उपचार एवं झाड़-फूँक किया जाता है वो स्वयं अपने आप में लाभदायक एवं रोगनिवारक तो हैं किंतु किसी मानव पर प्रभाव छोड़ने के लिए इन्हें उचित स्थान एवं ऐसा करने वाले के हिम्मत व उसके असर की आवश्यकता होती है, तो यदि किसी पर ये अज़्कार एवं दुआएं प्रभावी होने में असफल हों तो ऐसा या तो उस करने वाले के अंदर दुर्बलता के कारण हुआ है, अथवा उस स्थान के क़बूल न करने के कारण या किसी ऐसी शक्तिशाली रुकावट के कारण हुआ है जिसने इस दवा (अर्थात अज़्कार व दुआएं) को अपना प्रभाव छोड़ने में असफल कर दिया है, जैसा वास्तविक रोग एवं दवा के साथ होता है, क्योंकि कभी-कभी औषधि इसलिए प्रभावी नहीं हो पाती है क्योंकि मानव शरीर उसे स्वीकार नहीं कर पाता है, और कभी उस रूकावट के कारण यह औषधि अपना प्रभाव नहीं छोड़ पाती है जो मानव शरीर में विद्यमान होता है जो उसे लाभ पहुँचाने से रोक देता है, क्योंकि मानव शरीर यदि पूर्णरूपेण दवा को अच्छे ढ़ंग से स्वीकार कर ले तो उसी अनुपात में उस दवा का प्रभाव भी मानव शरीर पर पड़ता है, ठीक इसी प्रकार हृदय भी यदि (शरई) झाड़-फूँक तथा मुअव्वज़ात (अल्लाह की शरण मांगने वाली दुआओं) को पूर्णरूपेण स्वीकार कर ले तो उसी अनुपात में उसका प्रभाव पड़ेगा, इसी प्रकार से झाड़-फूँक करने वाले के साहस एवं उत्साह का भी रोग को दूर करने में बड़ा प्रभाव होता है।

इसी प्रकार, वांछनीय को पाने तथा अवांछनीय को दूर करने के माध्यमों में से सबसे तगड़ा माध्यम दुआ है, किंतु इसके बावजूद यदा-कदा यह प्रभावहीन हो जाता है, ऐसा या तो स्वयं उस दुआ में कमज़ोरी के कारण होता है जैसे वह ऐसी दुआ हो जो अत्याचार आधारित हो और अल्लाह तआला इसे पसंद नहीं करता, अथवा हार्दिक कमज़ोरी के कारण हो जैसे दुआ करते समय अल्लाह की ओर पूर्णरूपेण आकर्षित नहीं होना, यह उस धनुष के समान है जो बिल्कुल ढ़ीली हो परिणामस्वरूप इससे निकलने वाला बाण भी एक दम दुर्बल एवं प्रभावहीन होगा।

या किसी ऐसी चीज़ के कारण होगा जो उस दुआ को स्वीकार्य होने से रोक दे जैसे ह़राम खाना, ज़ुल्म व अत्याचार करना, दिल का गुनाहों से अटा होना, ग़फ़लत, शहवत एवं खेल-कूद व आनंद में डूबा होना, जैसाकि मुसतदरक ह़ाकिम में अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया: (ادعو الله وأنتم موقنون بالإجابة،

(واعلموا أن الله لا يستجيب دعاء من قلب غافلٍ لاهٍ) "तुम अल्लाह से इस उम्मीद के साथ दुआ करो कि तुम्हारी दुआ अवश्य स्वीकार की जाएगी, और यह बात भली भांति जान लो कि अल्लाह तआला खिलवाड़ करते हुए बिना दिल से किए गए दुआ को क़बूल नहीं करता है"।[1]

तो यह दुआ मूल रूप से रोग को दूर करने में लाभदायक तो है किंतु दिल का अल्लाह की इबादत से दूर होना उसको निष्क्रिय कर देता है।

इसी प्रकार ह़राम खाना भी इसकी शक्ति को क्षीण तथा इसे कमज़ोर कर देता है, जैसाकि सह़ीह़ मुस्लिम में अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु की रिवायत है, वह कहते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः "हे लोगों, अल्लाह तआला पाक व पवित्र है तथा वह केवल पवित्र को ही स्वीकार करता है, और अल्लाह तआला ने मोमिनों को उसी चीज़ का आदेश दिया है जिसका आदेश उसने रसूलों को दिया है, अतः फ़रमायाः ﴿يَٰٓأَيُّهَا ٱلرُّسُلُ كُلُواْ مِنَ ٱلطَّيِّبَٰتِ وَٱعۡمَلُواْ صَٰلِحًاۖ إِنِّي بِمَا تَعۡمَلُونَ عَلِيمٞ﴾[2] (हे रसूलों, पवित्र खाना खाओ एवं नेक अमल (सदकर्म) करो तुम जो भी करते हो उसे मैं जानता हूँ), तथा फ़रमायाः ﴿كُلُواْ مِن طَيِّبَٰتِ مَا رَزَقۡنَٰكُمۡ﴾[3] (हे मोमिनों, मैंने तुमको जो ह़लाल व पवित्र आजीविका दी है उसमें से खाओ), तत्पश्चात आपने एक व्यक्ति का उल्लेख कियाः (أشعث[4] أغبر[5]، يمد يديه إلى السماء؛ يا رب، يا رب) ومطعمه حرام، ومشربه حرام، وملبسه حرام، وغذي بالحرم، فأنى يستجاب لذلك), जो लम्बी यात्रा करके आया है, उसके सिर तथा पाँव गर्द से अटे हुए हैं, वह अपने हाथों को आसमान की ओर फैलाता है और दुआ करता है (हे मेरे रब, हे मेरे रब), जब्कि उसका खाना ह़राम, उसका पीना ह़राम, उसका पहनना ह़राम है और ह़राम के द्वारा ही उसकी परवरिश हुई है, तो कैसे उसकी दुआ स्वीकार की जाएगी"।[6]

तत्पश्चात उन्होंने पृष्ठ २१ में लिखा हैः

---

[1] पूर्व में इस ह़दीस़ की तख़रीज (विवरण) का उल्लेख किया जा चुका है।

[2] सूरह मोमिनूनः ५१ ।

[3] सूरह बक़रहः १७२ ।

[4] अर्थात उसके सिर का बाल बिखरा हुआ हो।

[5] मटमैला, धूल-धूसरित।

[6] इस ह़दीस़ को मुस्लिम (१०१५) ने रिवायत किया है। यहाँ लेखक महोदय का कथन पृष्ठांकः १० में समाप्त होता है।

“दुआ एवं तअव्वुज़ात हथियार के समान हैं, तथा हथियार केवल धार मात्र का नाम नहीं है वरन हथियार नाम है उसके प्रयोग करने वाले का, तो जब हथियार पूरी तरह धारदार हो उसमें कोई त्रुटि नहीं हो, हथियार चलाने वाला बाज़ू मज़बूत हो तथा उसको प्रभावी होने से रोकने वाली कोई चीज़ वहाँ न हो, तब जा कर वह शत्रु को पूरी तरह से चोट पहुँचाने में सफल होगा, और इन तीनों चीज़ों में से किसी एक में भी जितनी कमी होगी उसी के अनुपात में वह प्रभावहीन होगा, इसी प्रकार से यदि दुआ स्वयं अपने आप में अनुचित हो, अथवा दुआ करने वाला अपने हृदय एवं ज़ुबान से पूर्णरूपेण ध्यान लगा कर दुआ ना करे, या उस दुआ को प्रभावहीन करने वाली कोई रूकावट वहाँ मौजूद हो तो उस दुआ का प्रभाव निष्क्रिय हो जाता है”।

तथा उन्होंने पृष्ठ १४ पर लिखा हैः

“और जब वह दुआ करते समय दिल से पूर्णरूपेण उपस्थित हो कर तल्लीनता के साथ पूरी तरह से एकाग्रचित्त हो कर वांछनीय वस्तु के लिए दुआ करे, और दुआ के स्वीकार्य होने के छः समय, रात का अंतिम तीसरा पहर, अज़ान के समय, अज़ान एवं इक़ामत के मध्य, फ़र्ज़ नमाज़ों के पश्चात, जुमा के दिन इमाम के मिंबर (मंच) पर चढ़ने से लेकर नमाज़ समाप्त होने तक, तथा जुमा के दिन अस्र के बाद दिन के अंतिम समय, इन छः में से किसी एक समय का चयन करते हुए दुआ करे, हार्दिक रूप से विनम्र होते हुए तथा अपने रब के समक्ष स्वयं को कमज़ोर दर्शाते हुए, स्वयं को छोटा दर्शाते हुए गिड़गिड़ा कर सविनय प्रार्थना करे, और प्रार्थी क़िबला की ओर रुख़ करके दुआ करे, वह पाकी की हालत में हो, अपने हाथों को आसमान की ओर उठाए, अल्लाह की बड़ाई व प्रशंसा से आरंभ करे, तत्पश्चात अल्लाह के बंदे व रसूल मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर दरूद भेजे, फिर दुआ करने के पूर्व तौबा व इस्तिग़फ़ार (क्षमा याचना) करे, फिर अल्लाह की ओर ध्यान मग्न हो कर पूरी तरह से गिड़गिड़ा कर दुआ करे, अल्लाह की रह़मत व मेहरबानी को उभारने वाले कर्म करे तथा उससे भयभीत एवं आशान्वित होते हुए दुआ करे, और अल्लाह के नाम, गुण एवं उसकी तौह़ीद को वसीला व माध्यम बनाए, और दुआ करने के पूर्व दान पुणय करे, यदि इस प्रकार से दुआ किया जाए तो ऐसी दुआ विरल ही रद्द की जाती है, विशेष रूप से यदि उन वर्णित दुआओं के द्वारा दुआ करे जिनके विषय में नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कहा है कि इसके स्वीकार्य होने की प्रबल संभावना होती है, या वह अल्लाह के इस्म -ए- आज़म (महान नाम) आधारित हों”। इब्नुल क़ैय्यिम रह़िमहुल्लाह का कथन समाप्त हुआ।

कुछ शुबुहात (दुविधाएं) एवं उनके उत्तर (समाधान)

कुछ लोगों ने चंद ह़दीस़ों को आधार बनाते हुए यह समझा है कि ये ह़दीस़ें क़ब्रों के पास दुआ करने की प्रधानता को प्रमाणित करती हैं, जब्कि वास्तव में ये ह़दीस़ें ज़ईफ़ व कमज़ोर तथा आधारहीन हैं जिनको आधार बनाना सही नहीं है, उनमें से चार अत्यंत प्रसिद्ध हैं:

प्रथम ह़दीस़ः वो लोग जो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की क़ब्र के पास दुआ करने को प्रधानता देते हैं उनकी दलील बैहिक़ी की वह ह़दीस़ है जिसे उन्होंने “शुअब अल-ईमान” में रिवायत किया है, वह कहते हैं:

हमें अबू सईद बिन अबि अम्र ने सूचना दी, उन्हें अबू अब्दुल्लाह अल-सफ़्फ़ार ने सूचना दी, वह कहते हैं कि हमसे अबू बकर बिन अबिद्दुनिया ने बयान किया, वह कहते हैं हमसे सईद बिन अबी उस़्मान ने बयान किया है, वह कहते हैं कि हमसे इब्ने अबी फुदैक ने बयान किया है, वह कहते हैं किः मैंने कुछ लोगों को कहते हुए सुना है कि, हम तक यह सूचना पहूँची है कि जो व्यक्ति नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की क़ब्र (समाधि) के समीप खड़ा हो कर इस आयत की तिलावत करेः ﴿إِنَّ ٱللَّهَ وَمَلَٰٓئِكَتَهُۥ يُصَلُّونَ عَلَى ٱلنَّبِيِّۚ يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُواْ صَلُّواْ عَلَيۡهِ وَسَلِّمُواْ تَسۡلِيمًا ٥٦﴾ ((अल्लाह तथा उसके फरिश्ते नबी पर दरूद भेजते हैं, हे ईमान वालों उन पर दरूद व अधिकाधिक सलाम भेजो), आप पर अल्लाह की ओर से दरूद उतरे हे मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम)), जब सत्तर बार वह इस प्रकार कहता है तो एक फरिश्ता (देवदूत) उसको उत्तर देते हुए कहता हैः हे अमूक, तुम पर अल्लाह की ओर से रह़मत अवतरित हो, तेरी आवश्यकता की अवश्य ही पूर्ति की जाएगी।[1]

इस ह़दीस़ को अबू अब्दुल्लाह अल-नज्जार ने इब्ने अबिद्दुनिया के त़रीक़ (माध्यम) से अपनी किताब “अख़बार अल-मदीना”[2] में रिवायत किया है।

इसका जवाब यह है कि यह अस़र अत्यंत ज़ईफ़ (आधारहीन) है, जिसके मूल वर्णनकर्ता का कोई अता पता नहीं है, क्योंकि इब्ने अबी फुदैक ने जिस से इसको रिवायत किया है उसका परिचय ही नहीं करवाया है, क्योंकि वह कहते हैं किः “कुछ लोगों” ने जिन से मेरी

[1] “शुअब अल-ईमान” (३/ ४९२) संख्यांक (४१६८)।

[2] “अल-दुर्रह अल-स़मीना फ़ी अख़बार अल-मदीना”, पृष्ठः २९४।

भेंट हुई यह बयान किया, इस पर तुर्रा यह कि यह “कुछ लोग” भी कहते हैं किः (हमें यह सूचना मिली है), अतः यह मजहूल (अज्ञात) की मजहूल से रिवायत है, अतः यह मोअज़ल[1] है।

फिर यह भी ज्ञात रहे कि यह मत्न (ह़दीस़ के शब्द) मुन्कर है, क्योंकि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से सह़ीह़ सनद से प्रमाणित है कि आपने फ़रमायाः “जिसने मुझ पर एक बार दरूद भेजा अल्लाह तआला उस पर दस रहमतें (कृपा) नाज़िल करता है”, जब्कि इस ह़दीस़ का अर्थ यह निकलता है कि जिसने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर सत्तर बार दरूद भेजा तो फरिश्ता मात्र एक बार उस पर रह़मत की दुआ करता है।[2]

द्वितीय ह़दीस़ः मुह़म्मद बिन ह़सन बिन ज़ुबाला अपनी किताब “अख़बार अल-मदीना”[3] में लिखते हैं कि मैंने मदीना वासियों में से एक व्यक्ति को देखा जिसे मुहम्मद बिन कीसान कहा जाता था, वह जुमा के दिन जब अस्र की नमाज़ पढ़ लेता तो आता और नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की क़ब्र के पास खड़ा हो जाता, और हम रबीआ बिन अबू अब्दुर्रह़मान[4] के संग बैठे होते, फिर वह नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को सलाम करता यहाँ तक कि शाम हो जाती, रबीआ के संग बैठे हुए लोग कहतेः देखो यह क्या कर रहा है? तो वह उत्तर देते हुए कहतेः छोड़ो, इंसान जिसकी नीयत करता है उसी का एतबार होता है।

इसका उत्तर यह है किः इस वृत्तांत की सनद अत्यंत ज़ईफ़ (आधारहीन) है, क्योंकि इस क़िस्सा को बयान करने वाला रावी -ह़सन बिन मुह़म्मद बिन ज़ुबाला- कज़्ज़ाब (महा झूठा) है, जैसाकि अबू दाऊद ने कहा है।

---

[1] मोअज़ल, ह़दीस़ की वह क़िस्म है जिसकी सनद में से दो रावी (वाचक) निर्बाध गिर गया हो।

[2] मैंने इस “अस़र” की “इल्लत अर्थात कमज़ोरी” को “इक़्तेज़ा अल-स़िरात अल-मुस्तक़ीम” (२/ ७३०) से नक़ल किया है।

[3] इस अस़र को मैंने इब्ने तैमीय्या की किताब “इक़्तेज़ा अल-स़िरात अल-मुस्तक़ीम” (२/ ७३१) से नकल किया है, क्योंकि “अख़बार अल-मदीना” नामक पुस्तक गुम व लापता है, जैसाकि शोधकर्ता अब्दुल अज़ीज़ बिन सलामा ने अपने शोध पत्र “अख़बार अल-मदीना” में इसको स्पष्ट किया है (इस पुस्तक का प्रकाशनः मरकज़ बुहूस़ व दिरासात अल-मदीना ने किया है), इस पुस्तक में शोधकर्ता ने इब्ने ज़ुबाला के कथन को उन पुस्तकों से संग्रहित किया है जिनसे मैंने नक़ल किया है, जैसे अली बिन अब्दुल्लाह सम्हूदी रह़िमहुल्लाह की “वफ़ा अल-वफ़ा बि अख़बार दार अल-मुस्तफ़ा” नामक पुस्तक।

[4] रबीआ बिन अबू अब्दुर्रह़मान फ़र्रूख़, अबू उस्मान अल-मदनी फ़क़ीह, यह मदीना के विद्वान थे, इनको रबीआ अल-राय के नाम से भी जाना जाता है, इन्होंने अनस बिन मालिक, सईद बिन अल-मुसय्यिब से रिवायत किया है, उनकी प्रसिद्धि का यह आलम था कि फ़त्वा देने के लिए उनके समीप लोगों का मजमा व जमावड़ा लगता था, उनसे इमाम मालिक ने रिवायत किया है, इनका देहांत सन १३६ हिजरी में हुआ। उनकी जीवनी के बारे में पढ़ने के लिए देखें ज़हबी की कि पुस्तक “तज़किरतुल हुफ़्फ़ाज़” को।

और नसई ने कहाः मतरूक है।

और अबू हातिम कहते हैं: वाही अल-हदीस़ है।

और दार क़ुतनी आदि ने कहा है किः वह मुन्करुल हदीस़ है।[1]

और इब्ने हज़्म का कथन है किः सामान्य रूप से इसकी बात का कोई मान नहीं है, इसके बारे में यह्या बिन मईन ने कहा हैः वह स़िक़ा (विश्वसनीय) नहीं है, संक्षेप में कहें तो इस पर सभों की सर्वसहमति है कि उसकी बात आधारहीन होती है जिसे उठा कर फेंक देना चाहिए।[2]

अतः इस आधार पर इस क़िस्सा पर भरोसा नहीं किया जा सकता, और रबीआ की तरफ़ जो चीज़ मंसूब की गई है वह उनसे बरी हैं क्योंकि उनसे रिवायत करने वाला रावी कज़्ज़ाब (महा झूठा) है।

तृतीय अस़रः इब्ने ज़ुबाला "अख़बार अल-मदीना"[3] में कहते हैं: मुझसे उमर बिन हारून ने सलमा बिन वरदान के हवाले से रिवायत किया, वह कहते हैं किः मैंने अनस बिन मालिक को नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम (की समाधि) को सलाम करते हुए देखा, तत्पश्चात आपने अपनी पीठ को क़ब्र की दीवार से सटाया फिर दुआ करने लगे।

इसका उत्तर यह है किः यह अस़र ज़ईफ़ जिद्दा (बिल्कुल आधारहीन) है, क्योंकि इब्ने ज़ुबाला, मुहम्मद बिन हसन बिन ज़ुबाला है, जोकि महा झूठा (कज़्ज़ाब) है, और उमर बिन हारून भी झूठा होने का आरोपी है[4], और सलमा बिन वरदान ज़ईफ़ुल हदीस़ है[5]।[6]

चतुर्थ अस़रः क़ब्रों के पास दुआ करने को जिन लोगों ने प्रधानता दी है उन्होंने अपने प्रमाण के तौर पर बड़े उलेमा से सम्बद्ध मिथ्या व झूठी बातों को भी दलील बनाया, और उसे शरीअत के समानांतर स्थान दे कर उसकी पैरवी करने लगे, उन्हीं क़िस्सों में से एक इमाम शाफ़ई रहिमहुल्लाह से संबद्ध है कि वह सउद्दश्य अबू हनीफ़ा रहिमहुल्लाह की क़ब्र के पास जाकर दुआ किया करते थे, और इस वृत्तांत का उल्लेख "ख़तीब बग़दादी" ने अपनी किताब "तारीख़

---

[1] देखें: "मीज़ान अल-एतदाल" (६/ १०८)।

[2] देखें: इब्ने हज़्म रचित "अल-मुहल्ला" (५/ ३३२, ३३४)।

[3] इस अस़र को मैंने इब्ने तैमीय्या की किताब "इक़्तेज़ा अल-स़िरात अल-मुस्तक़ीम" (२/ ७३३) से नकल किया है।

[4] देखें: "तक़रीब अल-तहज़ीब"।

[5] देखें: "तक़रीब अल-तहज़ीब"।

[6] इब्ने तैमीय्या ने "इक़्तेज़ा अल-स़िरात अल-मुस्तक़ीम" (२/ ७३३) में जो लिखा है उसको देखें।

-ए- बग़दाद” में किया है, वह कहते हैं, मुझे क़ाज़ी अबू अब्दुल्लाह हुसैन बिन अली बिन मुहम्मद अल-स़ैमरी ने सूचना दी, वह कहते हैं: हमें उमर बिन इब्राहीम अल-मुक़री ने ख़बर दी, वह कहते हैं: हमसे मुक्रम बिन अहमद ने बयान किया, वह कहते हैं: हमसे उमर बिन इस्हाक़ बिन इब्राहीम ने बयान किया, वह कहते हैं: हमसे अली बिन मैमून ने बयान किया, वह कहते हैं: मैंने शाफ़ई को कहते हुए सुना किः मैं अबू हनीफ़ा से तबर्रुक अर्थात बरकत हासिल करता हूँ, मैं प्रत्येक दिन उनकी क़ब्र के पास -अर्थात ज़ियारत व भ्रमण करने हेतु- आता हूँ, जब भी मुझे कोई हाजत एवं आवश्यकता होती है तो मैं दो रकात नमाज़ पढ़ता हूँ तथा उनकी क़ब्र (समाधि) के पास आता हूँ, और अल्लाह तआला से उस हाजत का सवाल करता हूँ, तो मेरी वह हाजत शीघ्र ही पूरी कर दी जाती है।[1]

इसका उत्तर यह है किः इस क़िस्से का इमाम शाफ़ई रहिमहुल्लाह से संबंध जोड़ना छः कारणों से ज़ईफ़ (आधारहीन) हैः

पहला कारणः इस क़िस्सा की सनद ज़ईफ़ है, अल्लामा अलबानी रहिमहुल्लाह इस क़िस्सा की सनद के संबंध में कहते हैं:

यह रिवायत ज़ईफ़ (आधारहीन) है, बल्कि बातिल (मिथ्या) है, क्योंकि उमर बिन इस्हाक़ अज्ञात है, इल्म -ए- रिजाल से संबंधित पुस्तकों में उसका कोई उल्लेख नहीं मिलता है, और संभवतः वह अम्र बिन इस्हाक़ बिन इब्राहीम बिन हुमैद बिन अल-सकन अबू मुहम्मद अल-तूनसी हो सकता है, ख़तीब ने उनकी जीवनी (२/ २२६) लिखी है, और कहा है कि वह बुख़ारा का निवासी है, सन ३४१ हिजरी में हज के उद्देश्य से बग़दाद से गुज़रा, तथा उसकी न तो प्रशंसा की है और न ही भर्त्सना, अतः इस आधार पर वह मजहूलुल हाल (जिसका स्थिति स्पष्ट न हो) है, किंतु यह असंभव सा प्रतीत होता है, क्योंकि उसके गुरू अली बिन मैमून का देहांत अधिकांश लोगों के मतानुसार सन २४७ हिजरी में हुआ, इस आधार पर उसके तथा उसके गुरू के देहांत के मध्य लगभग सौ वर्ष का अंतर है, अतः यह असंभव है कि उसकी भेंट उनसे हुई हो, बहरहाल यह रिवायत ज़ईफ़ है जिसके सही होने का कोई प्रमाण नहीं है।[2]

दूसरा कारणः ऐसा होना असंभव है, चुनाँचे इब्ने तैमीय्या रहिमहुल्लाह कहते हैं:

---

[1] (१/ ४४५), तहक़ीक़ (शोधकर्ता): बश्शार अव्वाद, प्रकाशनः दार अल-ग़र्ब अल-इस्लामी, बैरूत।

[2] “अल-सिलसिला अल-ज़ईफ़ा” (१/ ७८) संक्षेप में।

इसी स्थान पर अल्लामा अलबानी ने कौस़री का खंडन करते हुए कहा हैः “कौस़री का अपने लेख में यह कहना किः (तारीख़ अल-ख़तीब के प्रारंभ में सही सनद से यह प्रमाणित है कि इमाम शाफ़ई इमाम अबू हनीफ़ा को वसीला बनाते थे), यह अतिश्योक्ति की पराकाष्ठा है, बल्कि यह खुला धोखा देना है”।

यह असंभव है कि उम्मत किसी कार्य के उत्तम होने पर सहमत हो इस अर्थ में कि अमूक कार्य करना यदि उत्तम होता तो नेक पूर्वजों ने किया होता, और वो ऐसा नहीं करें, यह आम सहमति (इज्माअ) के विरुद्ध है, जब्कि इसमें कोई विरोधाभास नहीं होता है, और यदि किसी मसले में बाद के लोगें के बीच मतभेद हो जाए तो उनके मध्य फैसला करने वाला केवल क़ुरआन, ह़दीस़ एवं पूर्वजों की आम सहमती (इज्माअ) है चाहे वह नस से संबंधित हो अथवा इस्तिंबात अर्थात दलीलों से मसला निकाला गया हो, अतः यह कैसे संभव है!!! -वलह़म्दुलिल्लाह (समस्त प्रकार की प्रशंसा अल्लाह के लिए है)- किसी भी प्रसिद्ध इमाम अथवा अनुकरणीय आलिम से ऐसा कुछ भी नक़ल नहीं किया गया है, बल्कि उनसे संबंधित जो भी बातें नक़ल की गई हैं वो या तो झूठी हैं, जैसाकि कुछ लोगों ने इमाम शाफ़ई से यह नक़ल किया है किः वह कहते हैं ... फिर उन्होंने उपरोक्त क़िस्सा बयान किया।[1]

तीसरा कारणः इसको भी इब्ने तैमीय्या रह़िमहुल्लाह ने ही बयान किया हैः “कि इमाम शाफ़ई जब बग़दाद आए तो उस समय बग़दाद में कोई ऐसी क़ब्र व समाधि नहीं थी जिसके पास जाकर दुआ करने को लोग बेहतर समझते हों, बल्कि शाफ़ई के युग तक ऐसी कोई बात लोगों के मध्य प्रचलित ही नहीं थी, जब्कि इमाम शाफ़ई रह़िमहुल्लाह ने हिजाज़, यमन, शाम, इराक़ तथा मिस्र में नबियों, स़हाबा एवं ताबईन की अनेक क़ब्रों को देखा जो उनके निकट तथा समस्त मुस्लिमों के निकट इमाम अबू ह़नीफ़ा तथा उन जैसे उलेमा से ह़ज़ारों गुणा बेहतर हैं, तो आपके क्या विचार हैं कि उन्होंने वहाँ पर इस प्रकार से क़ब्र के पास जाकर दुआ नहीं किंतु अबू ह़नीफ़ा की क़ब्र के पास जाकर दुआ किया।

फिर यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि अबू ह़नीफ़ा के वो शिष्य एवं साथी जिन्होंने उनका युग पाया था जैसे अबू यूसुफ़, मुह़म्मद, ज़ुफ़र तथा ह़सन एवं उनके समय के अन्य लोग वो भी न तो इमाम अबू ह़नीफ़ा की क़ब्र (समाधि) के पास जाकर दुआ करते थे और न ही किसी अन्य की समाधि के पास”।[2]

चौथा कारणः इमाम शाफ़ई से उनकी किताब में यह बात प्रमाणित है कि वह फित्ना[3] में पड़ जाने के डर से मानव जाती कि क़ब्रों के महिमामंडन एवं आदर करने को मकरूह (अप्रिय)

---

[1] “मजमूअ अल-फ़तावा” (२/ ६९२), थोड़े संशोधन के साथ।

[2] “मजमूअ अल-फ़तावा” (२/ ६९२), थोड़े संशोधन के साथ।

[3] इमाम शाफ़ई रह़िमहुल्लाह अपनी किताब “अल-उम्म” के किताबुल जनाइज़, (दफ़न के बाद क्या करना है, अध्याय) के अंतर्गत लिखते हैं:

समझते थे, अतः उनसे संबंधित इस प्रकार का झूठा क़िस्सा वही गढ़ सकता है जिसका धर्म के ऊपर विश्वास एवं बोद्धिक क्षमता कमज़ोर हो, या यह कहें कि यह वृत्तांत ऐसे व्यक्ति से नक़ल किया गया है जो मजहूल अर्थात अज्ञात है जिसका कुछ अता पता नहीं है।

हमारा हाल तो यह है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से भी यदि इस प्रकार के विकृत एवं मनगढ़त किस्सा के समान ह़दीस़ रिवायत की जाए तो उसे हम उस समय तक नहीं मानेंगे जब तक वह सही सनद से प्रमाणित न हो जाए, तो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अतिरिक्त किसी और से संबद्ध इस प्रकार के मनगढ़त किस्सों के प्रति हमारा क्या रवैया होगा इसका आप सहज अंदाज़ा लगा सकते हैं।[1]

पाँचवां कारण: शैख़ अब्दुर्रह़मान बिन यह़्या अल-मुअल्लिमी[2] रह़िमहुल्लाह अपनी किताब "तलीआ अल-तन्कील"[3] में इस क़िस्सा की सनद को ज़ईफ़ क़रार देने के पश्चात लिखते हैं:

यह तो था इसकी सनद का हाल, और किसी भी बुद्धिजीवी से यह बात छुपी नहीं है कि इस प्रकार की चीज़ें प्रमाणित नहीं होतीं, बल्कि हवा हवाई होती हैं, **इस क़िस्सा की जो स्थिति है वह इसकी और अधिक पुष्टि करती है, क्योंकि एक तो प्रत्येक दिन अबू**

मैं यह पसंद करता हूँ कि उसे चूना (अर्थात पक्का) न किया जाए, क्योंकि इससे साज-सज्जा तथा घमंड का आभास होता है, और मौत इन दोनों से दूरी का नाम है, मैंने मुहाजिरीन एवं अंसार किसी की भी क़ब्र को चूना किया हुआ नहीं देखा।

मैंने मक्का के शासकों को इस प्रकार के पक्के भवन को ढ़ाते हुए देखा है, और वहाँ विद्यमान फ़ुक़हा (धर्मशास्त्री) को इसका खंडन करते हुए नहीं पाया।

इसी अध्याय में वह कहते हैं: क़ब्र के ऊपर भवन निर्माण को में मकरूह (अप्रिय) समझता हूँ।

[1] "मजमूअ अल-फ़तावा" (२/ ६९२), थोड़े संशोधन के साथ।

[2] शैख़ अब्दुर्रह़मान का पालन-पोषण यमन में हुआ, वहाँ से यात्रा करके सन १३२९ हिजरी में आप अरब द्वीप के जीज़ान में आ गए और वहाँ क़ज़ा (न्यायाधीश) का पदाभार संभाला, तत्पश्चात आपने सन १३४१ हिजरी में भारत की यात्रा की और वहाँ हैदराबाद स्थित दाइरतुल मआरिफ़ अल-उस़्मानिया में लगभग पौन शताब्दी तक ह़दीस़ एवं इतिहास की पुस्तकों का संशोधन करते रहे, फिर वहाँ से सन १३७१ हिजरी में लौट कर मक्का आ गए और यहाँ ह़रम -ए- मक्की के पुस्तकालय के पर्यवेक्षक निर्धारित किए गए, और यहीं रहते हुए सन १३८६ हिजरी में आपका देहांत हो गया।

इल्म -ए- रिजाल इत्यादि से संबंधित अत्यंत महत्वपूर्ण पुस्तकें आपने लिखी हैं, उनमें से कुछ ये हैं: "अत्तंकील बिमा फ़ी तानीब अल-कौस़री मिनल अबात़ील" एवं इब्ने अबी ह़ातिम रचित "अल-जर्ह व अल-तादील" आदि का संशोधन किया है।

उनकी जीवनी पढ़ने के लिए देखें: ज़िरिकली की "अल-आलाम" (३/ ३४२)।

[3] पृष्ठः ७६, प्रकाशकः दार आलम अल-फ़वायद, मक्का।

ह़नीफ़ा रह़िमहुल्लाह की क़ब्र का भ्रमण आदतानुसार असंभव प्रतीत होता है, और दूसरी ओर इमाम शाफ़ई रह़िमहुल्लाह का इस प्रकार से सउद्देश्य अबू ह़नीफ़ा की क़ब्र का भ्रमण भी असंभव मालूम पड़ता है, और ज्ञात रहे कि क़ब्रों के पास इस प्रकार से जाकर अपनी आवश्यकतापूर्ति के लिए सवाल करना, इसका चलन इमाम शाफ़ई रह़िमहुल्लाह के गुज़र जाने के बहुत बाद में आरंभ हुआ, और नमाज़ पढ़ने के उद्देश्य से वहाँ जाने का चलन तो और भी कई युग बीतने के बाद चलन में आया। उनका कथन समाप्त हुआ।

छठा कारणः यह असंभव सा प्रतीत होता है कि इमाम शाफ़ई जैसा व्यक्ति इमाम अबू ह़नीफ़ा की क़ब्र को वसीला और माध्यम बनाए, क्योंकि यह बात तय है कि अबू ह़नीफ़ा इसको ह़राम समझते थे, उन्हीं का यह कथन हैः "किसी के लिए भी जो अल्लाह से दुआ कर रहा हो यह उचित नहीं कि वह अल्लाह को छोड़ कर किसी अन्य माध्यम से दुआ करे, और मैं इस बात को नापसंद करता हूँ कि कोई इस प्रकार से दुआ करेः मैं तेरे अर्श (सिंहासन) के इज़्ज़त वाले स्थान का वास्ता दे कर तुझसे सवाल करता हूँ, यह यों कहे किः अमूक के ह़क़ के द्वारा, अथवा तेरे नबियों एवं रसूलों के वास्ते से, या फिर बैतुल ह़राम (काबा) के वास्ते से तुझसे सवाल करता हूँ"।

यह विवेक के बिल्कुल प्रतिकुल है।[1]

उपरोक्त बातों के आधार पर यह प्रमाणित हो गया कि तह़क़ीक़ करने वाले उलेमा (शोधकर्ता) इस क़िस्सा के बातिल एवं मनगढ़त होने पर एकमत हैं, चुनाँचे इमाम इब्नुल क़ैय्यिम रह़िमहुल्लाह ने अपने गुरू इब्ने तैमीय्या रह़िमहुल्लाह का कथन अपनी पुस्तक "इग़ास़ा अल-लह्फ़ान" में नक़ल किया हैः

"इमाम शाफ़ई रह़िमहुल्लाह से संबद्ध यह वृत्तांत कि वह दुआ करने के उद्देश्य से इमाम अबू ह़नीफ़ा रह़िमहुल्लाह की समाधि के पास जाया करते थे, खुला हुआ झूठ है"।[2]

---

[1] शैख़ नसीब अल-रिफ़ाई रह़िमहुल्लाह की पुस्तक "अल-तवस़्सुल इला ह़क़ीक़त अल-तवस्सुल" (पृष्ठः ३३१-३३२), प्रकाशनः अल-मकतबा अल-मक्किया, मक्का, से थोड़े संशोधन के साथ नक़ल किया गया।

[2] पृष्ठः ३९२।

टिप्पणीः इब्ने ह़जर अल-हैस़मी[1] अल-मक्की ने इस क़िस्सा को "अल-ख़ैरात अल-ह़िसान फ़ी मनाक़िब अबी ह़नीफ़ा अल-नोमान" नामक अपनी पुस्तक के पच्चीसवें अध्याय में नकल किया है, अतः जागृत एवं सावधान रहें।

[1] अह़मद बिन मुह़म्मद बिन अली बिन ह़जर अल-हैस़मी अल-शाफ़ई, शाफई मज़हब (मत) के फ़क़ीह (धर्मशास्त्री) एवं सूफी थे, मक्का आए तथा इसी को अपना निवास स्थान बना लिया, यहाँ तक कि मक्का ही में सन ९७३ हिजरी में आपका देहांत हुआ। उनकी जीवनी पढ़ने के लिए देखें: इब्नुल इमाद अब्दुल ह़य्य बिन अह़मद अल-अकरी अल-दिमश्क़ी की किताब "शज़रात अल-ज़हब फ़ी अख़बार मन ज़हब", प्रकाशकः दार इब्न कस़ीर, दिमश्क़।

लेख की समाप्ति एवं उसका सारांश

उपरोक्त बातों से दुआ के स्वीकार्य होने की प्रबल संभावना रखने वाले शरीअत आधारित समय एवं स्थान इत्यादि का भली-भांति स्पष्टिकरण हो गया, जिसको हमारे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जो अपनी उम्मत के लए अत्यंत कृपा भाव रखने वाले थे पूर्णरूपेण स्पष्ट कर दिया है, अतः अब जो कोई इस स्थान एवं समय को छोड़ किसी अन्य ढ़ंग से दुआ करने को प्राथमिकता देगा, जैसे क़ब्रों इत्यादि के पास जाकर दुआ करना जिसके बारे में शरीअत में कोई दलील अवतरित नहीं हुई है, तो मानो उसने अल्लाह के दीन में ऐसी चीज़ की वृद्धि कर दी जो उसमें नहीं थी, और अल्लाह के विषय में बिना ज्ञान के बात कही, एवं शरीअत में दुस्साहस से काम लिया, अल्लाह तआला इससे हमारी रक्षा करे। (आमीन)।

وصلى الله على نبينا محمد، وعلى آله وصحبه، وسلم تسليما كثيرا.

(दरूद व सलाम हो हमारे नबी मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर, तथा उनके परिवार वालों एवं सहाबा पर, और अधिकाधिक सलाम व शांति हो उन पर।)

इस लेख को माजिद बिन सुलैमान अल-रस्सी ने २८ शाबान १४३४ हिजरी को क़लमबद्ध किया।

संदर्भ स्रोत

1- सुनन नसई अल-कुब्रा, लेखकः अह़मद बिन शुऐब अल-नसई, प्रकाशकः मकतबा रुश्द, रियाज़।

2- अल-मोअजम अल-वसीत़, लेखकः सुलेमान बिन अह़मद अल-त़बरानी, संशोधनः ऐमन सालेह़ शाबान तथा सैयद अह़मद इस्माईल, प्रकाशकः दार अल-ह़दीस़, क़ाहिरा।

3- सुनन अल-दारमी, लेखकः उस़्मान बिन सईद अल-दारमी, संशोधनः डॉक्टर मुस्तफ़ा बिन दीब अल-बुग़ा, प्रकाशकः दार अल-क़लम, दिमश्क़।

4- अल-किताब अल-मुस़न्नफ़ फी अल-अह़ादीस़ व अल-आस़ार, लेखकः अब्दुल्लाह बिन अबी शैबा, संशोधनः मुह़म्मद अब्दुस्सलाम शाहीन, प्रकाशकः मकतबा दार अल-बाज़, मक्का।

5- अल-मुस़न्नफ़, लेखकः अब्दुर्रज़्ज़ाक़ अल-स़नआनी, संशोधनः ह़बीबुर्रह़मान अल-आज़मी, प्रकाशकः अल-मकतब अल-इस्लामी, बैरूत।

6- शुअब अल-ईमान, लेखकः अबू बकर अल-बैहिक़ी, संशोधनः मुह़म्मद अल-सईद बिन बिस्यूनी ज़ग़लूल, प्रथम संस्करण, प्रकाशकः दार अल-कुतुब अल-इल्मीय्या, बैरूत।

7- फ़ज़्लुस्सलात अला अल-नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम, लेखकः इस्माईल बिन इस्ह़ाक़ अल-क़ाज़ी, संशोधनः शैख़ मुह़म्मद नास़िरुद्दीन अल-अलबानी, प्रकाशकः अल-मकतब अल-इस्लामी, बैरूत।

8- इक़्तेज़ा अल-स़िरात अल-मुस्तक़ीम लि मुख़ालिफ़ति अस़्हाब अल-जह़ीम, लेखकः शैख़ुल इस्लाम इब्ने तैमीय्या, संशोधनः डॉक्टर नास़िर बिन अब्दुल करीम अल-अक़्ल, पंचम संस्करण, प्रकाशकः मकतबा अल-रुश्द, रियाज़।

9- अल-रद्द अला अल-इख़्नाई, लेखकः इब्ने तैमीय्या, संशोधनः अह़मद बिन मूनिस अल-अनज़ी, प्रकाशकः दार अल-ख़र्राज़, जेद्दा।

10- इग़ास़ा अल-लह्फ़ान फ़ी मस़ायिद अल-शैतान, लेखक- इब्ने क़ैय्यिम अल-जौज़ीया, संशोधनः मुह़म्मद उज़ैर शम्स, प्रकाशकः दार आलम अल-फ़वायद, मक्का।

11- अल-अम्र बिल इत्तेबाअ व अल-नह्य अन इब्तिदाअ, लेखकः जलालुद्दीन अल-सुयूती, संशोधनः मशहूर ह़सन सलमान, द्वितीय संस्करण, प्रकाशकः दार इब्नुल क़ैय्यिम, दम्माम।

12- अल-शिफ़ा बि तारीफ़ हुक़ूक़ अल-मुस्तफ़ा, लेखकः क़ाज़ी एयाज़ बिन मूसा अल-यह़स़ुबी, संशोधनः मुहम्मद अल-अल्लावी, प्रकाशकः दार इब्न रजब, मिस्र।

13- ज़ाद अल-मआद फ़ी हदयि ख़ैर अल-इबाद, लेखकः इब्नुल क़ैय्यिम, संशोधनः अब्दुल क़ादिर अल-अरनऊत़ एवं शुऐब अल-अरनऊत़, प्रकाशकः मुअस्सिसा अल-रिसाला, बैरूत।

14- अल-दाअ व अल-दवा, लेखकः इब्नुल क़ैय्यिम, संशोधनः अली बिन ह़सन बिन अब्दुल ह़मीद, नवम संस्करण, प्रकाशकःदार इब्नुल जौज़ी, दम्माम।

15- अल-नुबज़ अल-मुस्तत़ाबह फ़ी अल-दावात अल-मुस्तजाबह, लेखकः सलीम अल-हिलाली, प्रकाशकः दार इब्नुल जौज़ी, दम्माम।

16- किताबुद्दुआ, लेखकः अब्दुल्लाह अल-ख़ुज़ैरी, प्रकाशकः मदार अल-वत़न, रियाज़।

विषय सूची

- प्रस्तावना।
- क़ब्रों के पास दुआ के अधिक स्वीकार्य होने का गुमान रखते हुए वहाँ दुआ करने को प्राथमिकता देने के बातिल (मिथ्या) होने का अध्याय।
- क़ब्रों के पास दुआ करने को प्राथमिकता देने वाले मसले के संबंध में इमाम मालिक आदि उलेमा के कथन का उल्लेख।
- सारांश।
- दुआ के मक़बूल व स्वीकार्य होने के शरई माध्यमों को बयान करने वाला अध्याय।
  - पहली क़िस्मः वह सबब जो स्वयं प्रार्थी (दुआ करने वाले) से संबंधित है।
  - दूसरी क़िस्मः वो अस्बाब (माध्यम) जिनका संबंध उस इबादत व उपासना से है जिसको प्रार्थी अंजाम देता है, और इनकी संख्या नौ (९) है।
  - तीसरी क़िस्मः वो अस्बाब जो प्रार्थी की दशा व हालत से संबंधित हैं, और इनकी संख्या पाँच (५) है।
  - चौथी क़िस्मः वो अस्बाब जो प्रार्थना के समय से संबंधित हैं, और इनकी संख्या पाँच (५) है।
  - पाँचवी क़िस्मः सामयिक व स्थानिक अस्बाब, और इनकी संख्या दो (२) है।
  - छठी क़िस्मः वो अस्बाब जो प्रार्थना के आदाब (शिष्टाचार) से संबंधित हैं, और इनमें मुख्य तेरह (१३) हैं।
  - प्रार्थना के स्वीकार्य होने के अस्बाब (कारण) से संबंधित इब्नुल क़ैय्यिम रहिमहुल्लाह के लेख से चयनित फ़ायदा
- लेख की समाप्ति एवं उसका सारांश
- विषय सूची
- संदर्भ स्रोत